॥ श्री चौबीस तीर्थंकराय नमः॥

विशद दीप अर्चना

(भाग- 1)

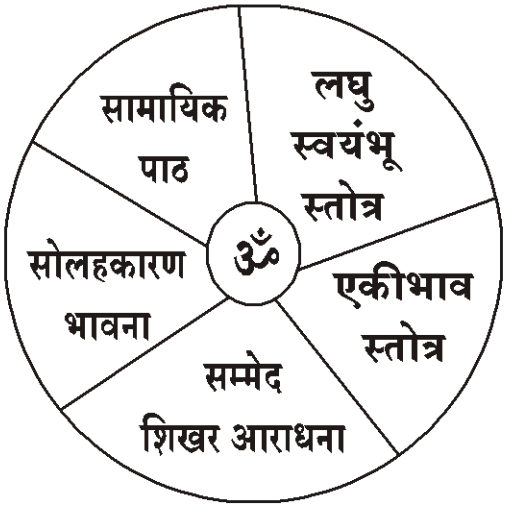

रचयिता :

प.पू. क्षमामूर्ति 108 आचार्य विशदसागरजी महाराज

कृति - विशद दीप अर्चना (भाग- 1)

कृतिकार - **प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज**

संस्करण - प्रथम-2020 ● प्रतियाँ :1000

संकलन - मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज
क्षुल्लक 105 श्री विसोमसागरजी
ब्र. प्रदीप भैया

सहयोग - आर्यिका 105 श्री भक्तिभारती
क्षुल्लिका 105 श्री वात्सल्य भारती

संपादन - ब्र. ज्योति दीदी (9829076085), आस्था दीदी (9660996425)
सपना दीदी (9829127533), आरती दीदी (8700876822)

प्राप्ति स्थल - 1. सुरेश जी सेठी, पी-958, गली नं. 3,
शांति नगर, जयपुर मो. 9413336017
2. विशद साहित्य केन्द्र
C/o श्री दिगम्बर जैन मंदिर, कुआँ वाला जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा) प्रधान ● मो.: 09416882301
3. लाल मंदिर, चाँदनी चौक, दिल्ली
4. जय अरिहन्त ट्रेडर्स, 6561, नेहरू गली, गाँधी नगर, दिल्ली
मो. 9818115971

मूल्य - 51/- रु. मात्र

- अर्थ सौजन्य :-

स्व. श्री सुरेश जैन की स्मृति में
विकास पेपर परिवार, दिल्ली

मुद्रक : राजू ग्राफिक आर्ट (संदीप शाह), जयपुर ● फोन : 2313339, मो.: 9829050791

लघु विनय पाठ-1

पूजा विधि से पूर्व यह, पढ़ें विनय से पाठ।
धन्य जिनेश्वर देवजी, कर्म नशाए आठ॥1॥
शिव वनिता के ईश तुम, पाए केवल ज्ञान।
अनन्त चतुष्टय धारते, देते शिव सोपान॥2॥
पीड़ाहारी लोक में, भव-दधि नाशनहार।
ज्ञायक हो त्रयलोक के, शिवपद के दातार॥3॥
धर्मामृत दायक प्रभो !, तुम हो एक जिनेन्द्र।
चरण कमल में आपके, झुकते विनत शतेन्द्र॥4॥
भविजन को भवसिन्धु में, एक आप आधार।
कर्म बन्ध का जीव के, करने वाले क्षार॥5॥
चरण कमल तव पूजते, विघ्न रोग हों नाश।
भवि जीवों को मोक्ष पथ, करते आप प्रकाश॥6॥
यह जग स्वारथ से भरा, सदा बढाए राग।
दर्श ज्ञान दे आपका, जग को विशद विराग॥7॥
एक शरण तुम लोक में, करते भव से पार।
अतः भक्त बन के प्रभो !, आया तुमरे द्वार॥8॥

मंगल पाठ

मंगल अर्हत् सिद्ध जिन, आचार्योपाध्याय संत।
धर्मागम की अर्चना, से हो भव का अंत॥9॥
मंगल जिनगृह बिम्ब जिन, भक्ती के आधार।
जिनकी अर्चा कर मिले, मोक्ष महल का द्वार॥10॥

॥ इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्॥

अथ पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय। नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु। णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।

ॐ ह्रीं अनादिमूल मंत्रेभ्यो नमः। (पुष्पांजलिं क्षिपामि)

चत्तारि मंगलं, अरिहन्ता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो, धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहन्ता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो, धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि शरणं पव्वज्जामि, अरिहंते शरणं पव्वज्जामि, सिद्धे शरणं पव्वज्जामि, साहू शरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं, धम्मं शरणं पव्वज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा। (पुष्पांजलिं क्षिपामि)

मंगल विधान

शुद्धाशुद्ध अवस्था में कोई, णमोकार को ध्याये।
पूर्ण अमंगल नशे जीव का, मंगलमय हो जाए॥
सब पापों का नाशी है जो, मंगल प्रथम कहाए।
विघ्न प्रलय विषनिर्विष शाकनी, बाधा न रह पाए॥

पुष्पांजलिं क्षिपेत्

अर्घ्यावली

जल गंधाक्षत पुष्प चरू, दीप धूप फल साथ।
अष्ट द्रव्य का अर्घ्य ले, पूज रहे जिन नाथ॥

ॐ ह्रीं श्री भगवतो गर्भ-जन्म-तप-ज्ञान निर्वाण पंचकल्याणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥
ॐ ह्रीं श्री अर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधूभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥
ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिन अष्टाधिक सहस्रनामेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥3॥
ॐ ह्रीं श्री द्वादशांगवाणी प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग नमः अर्घ्यं निर्व.स्वाहा॥4॥
ॐ ह्रीं श्री ढाईद्वीप स्थित त्रिऊन नवकोटि मुनि चरणकमलेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

'पूजा प्रतिज्ञा पाठ'

अनेकांत स्याद्वाद के धारी, अनन्त चतुष्टय विद्यावान।
मूल संघ में श्रद्धालू जन, का करने वाले कल्याण॥

तीन लोक के ज्ञाता दृष्टा, जग मंगलकारी भगवान।
भाव शुद्धि पाने हे स्वामी !, करता हूँ प्रभु का गुणगान॥1॥
निज स्वभाव विभाव प्रकाशक, श्री जिनेन्द्र हैं क्षेम विधान।
तीन लोकवर्ती द्रव्यों के, विस्तृत ज्ञानी हे भगवान !
हे अर्हन्त ! अष्ट द्रव्यों का, पाया मैंने आलम्बन।
होकर के एकाग्रचित्त मैं, पुण्यादिक का करूँ हवन॥2॥

ॐ ह्रीं विधियज्ञ प्रतिज्ञायै जिनप्रतिमाग्रे पुष्पांजलिं क्षिपामि।

स्वस्ति मंगल पाठ

ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन, सुमति पद्म सुपार्श्व जिनेश।
चन्द्र पुष्प शीतल श्रेयांस जिन, वासुपूज्य पूजूँ तीर्थेश॥
विमलानन्त धर्म शांती जिन, कुन्थु अरह मल्ली दें श्रेय।
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व प्रभु, वीर के पद में स्वस्ति करेय॥

इति श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर स्वस्ति मंगल विधानं पुष्पांजलिं क्षिपामि।

परमर्षि स्वस्ति मंगल पाठ

ऋषिवर ज्ञान ध्यान तप करके, हो जाते हैं ऋद्धीवान।
मूलभेद हैं आठ ऋद्धि के, चौंसठ उत्तर भेद महान॥
बुद्धि ऋद्धि के भेद अठारह, जिनको पाके ऋद्धीवान।
निस्पृह होकर करें साधना, 'विशद' करें स्व पर कल्याण॥1॥
ऋद्धि विक्रिया ग्यारह भेदों, वाले साधू ऋद्धीवान।
नौं भेदों युत चारण ऋद्धी, धारी साधू रहे महान॥
तप ऋद्धी के भेद सात हैं, तप करते साधू गुणवान।
मन बल वचन काय बल ऋद्धी, धारी साधू रहे प्रधान॥2॥
भेद आठ औषधि ऋद्धि के, जिनके धारी सर्व ऋशीष।
रस ऋद्धी के भेद कहे छह, रसास्वाद शुभ पाए मुनीश॥
ऋद्धि अक्षीण महानस एवं, ऋद्धि महालय धर ऋषिराज।
जिनकी अर्चा कर हो जाते, सफल सभी के सारे काज॥3॥

॥ इति परमर्षि-स्वस्ति-मंगल-विधानं॥ (पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन

(स्थापना)

देव-शास्त्र-गुरु पद नमन, विद्यमान तीर्थेश।
सिद्ध प्रभु निर्वाण भू, पूज रहे अवशेष।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरु विद्यमान विंशति जिनः, अनन्तानन्त सिद्ध, निर्वाण क्षेत्र समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

जल के यह कलश भराए, त्रय रोग नशाने आए।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।1।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ गंध बनाकर लाए, भवताप नशाने आए।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।2।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत हम यहाँ चढ़ाएँ, अक्षय पदवी शुभ पाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।3।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित ये पुष्प चढ़ाएँ, रुज काम से मुक्ती पाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।4।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पावन नैवेद्य चढ़ाएँ, हम क्षुधा रोग विनशाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।5।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत का ये दीप जलाएँ, अज्ञान से मुक्ती पाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।6।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नी में धूप जलाएँ, हम आठों कर्म नशाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते।।7।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे फल यहाँ चढ़ाएँ, शुभ मोक्ष महाफल पाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते॥8॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पावन ये अर्घ्य चढ़ाएँ, हम पद अनर्घ्य प्रगटाएँ।
हम देव-शास्त्र-गुरु ध्याते, पद सादर शीश झुकाते॥9॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घपद प्राप्तया अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- शांती धारा कर मिले, मन में शांति अपार।
अतः भाव से आज हम, देते शांती धार॥ शान्तये शांतिधारा

दोहा- पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, लिए पुष्प यह हाथ।
देव-शास्त्र-गुरु पद युगल, झुका रहे हम माथ॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

अर्घ्यावली

दोष अठारह से रहित, प्रभु छियालिस गुणवान।
देव श्री अर्हन्त का, करते हम गुणगान॥1॥

ॐ ह्रीं षट् चत्वारिंशत् गुण विभूषित अष्टादश दोष रहित श्री अरिहंत सिद्ध जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिन के सर्वांग से, खिरे दिव्य ध्वनि श्रेष्ठ।
द्वादशांग मय पूजते, लेकर अर्घ्य यथेष्ठ॥2॥

ॐ ह्रीं श्री जिन मुखोद्भूत सरस्वती देव्यै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विषयाशा त्यागी रहे, ज्ञान ध्यान तपवान।
संगारम्भ विहीन पद, करें विशद गुणगान॥3॥

ॐ ह्रीं श्री आचार्य उपाध्याय साधु परमेष्ठी चरण कमलेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बीस विदेहों में रहें, विरहमान तीर्थेश।
भाव सहित हम पूजते, लेकर अर्घ्य विशेष॥4॥

ॐ ह्रीं श्री विरहमान विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट कर्म को नाशकर, के होते हैं सिद्ध।
पूज रहे हम भाव से, जो हैं जगत् प्रसिद्ध॥5॥

ॐ ह्रीं श्री अनन्तानन्त सिद्धेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन लोक में जो रहे, तीर्थ क्षेत्र निर्वाण।
जिनकी अर्चा भाव से, करते यहाँ महान॥6॥

ॐ ह्रीं श्री सर्व निर्वाण क्षेत्रेभ्यो नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा- देव-शास्त्र-गुरु के चरण, वन्दन करें त्रिकाल।
'विशद' भाव से आज हम, गाते हैं जयमाल॥

(तामरस छंद)

जय-जय-जय अरहंत नमस्ते, मुक्ति वधू के कंत नमस्ते।
कर्म घातिया नाश नमस्ते, केवलज्ञान प्रकाश नमस्ते॥
जगती पति जगदीश नमस्ते, सिद्ध शिला के ईश नमस्ते।
वीतराग जिनदेव नमस्ते, चरणों विशद सदैव नमस्ते॥
विद्यमान तीर्थेश नमस्ते, श्री जिनेन्द्र अवशेष नमस्ते।
जिनवाणी ॐकार नमस्ते, जैनागम शुभकार नमस्ते॥
वीतराग जिन संत नमस्ते, सर्वसाधु निर्ग्रन्थ नमस्ते।
अकृत्रिम जिनबिम्ब नमस्ते, कृत्रिम जिन प्रतिबिम्ब नमस्ते॥
दर्श ज्ञान चारित्र नमस्ते, धर्म क्षमादि पवित्र नमस्ते।
तीर्थ क्षेत्र निर्वाण नमस्ते, पावन पञ्चकल्याण नमस्ते॥
अतिशय क्षेत्र विशाल नमस्ते, जिन तीर्थेश त्रिकाल नमस्ते।
शाश्वत तीरथराज नमस्ते, 'विशद' पूजते आज नमस्ते॥

दोहा- अर्हतादि नव देवता, जिनवाणी जिन संत।
पूज रहे हम भाव से, पाने भव का अंत॥

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- देव-शास्त्र-गुरु पूजते, भाव सहित जो लोग।
ऋद्धि-सिद्धि सौभाग्य पा, पावें शिव का योग॥

॥ इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

मूलनायक सहित समुच्चय पूजा

स्थापना (दोहा)

देव-शास्त्र-गुरु देव नव, विद्यमान जिन सिद्ध।
कृत्रिमा-कृत्रिम बिम्ब जिन, भू निर्वाण प्रसिद्ध॥
सहस्त्रनाम दशधर्म शुभ, रत्नत्रय णमोकार।
सोलह कारण का हृदय, आह्वानन् शत बार॥

ॐ ह्रीं अर्हं मूलनायक श्री...सहित सर्व देव-शास्त्र-गुरु, नवदेवता, तीस चौबीसी विद्यमान विंशति जिन, पंचमेरु, नन्दीश्वर, त्रिलोक सम्बन्धी, कृत्रिम अकृत्रिम चैत्य चैत्यालय, सहस्त्रनाम, सोलहकारण, दशलक्षण, रत्नत्रय, णमोकार, निर्माण क्षेत्रादि समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

यह निर्मल नीर चढ़ाएँ, जन्मादिक रुज विनशाएँ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित यह गंध चढ़ाएँ, भव सागर से तिर जाएँ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय भवाताप विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत के पुंज चढ़ाएँ, शाश्वत अक्षय पद पाएँ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पित हम पुष्प चढ़ाएँ, कामादिक दोष नशाएँ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चरु यह रसदार चढ़ाएँ, हम क्षुधा रोग विनशाएँ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ॥5॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नोंमय दीप जलाएँ, हम मोह तिमिर विनशाएँ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ॥6॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय महामोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित यह गंध चढ़ाएँ, भव सागर से तिर जाएँ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ॥7॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल ताजे शिव फलदायी, हम चढ़ा रहे हैं भाई।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ॥8॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

यह पावन अर्घ्य चढ़ाएँ, अनुपम अनर्घ्य पद पाएँ।
देवादि सर्व जिन ध्यायें, जिन प्रतिमा पूज रचाएँ॥9॥

ॐ ह्रीं अर्हं सर्व पूज्येसु श्री जिनेन्द्राय अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- शांती पाने के लिए, देते शांती धार।
हमको भी निज सम करो, कर दो यह उपकार॥

शान्तये शांतिधारा

दोहा- पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, लेकर पावन फूल।
विशद भावना है यही, कर्म होंय निर्मूल॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

जयमाला

दोहा- जैन धर्म जयवंत है, तीनों लोक त्रिकाल।
गाते जैनाराध्य की, भाव सहित जयमाल॥

(ज्ञानोदय छंद)

अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय, सर्व साधु के चरण नमन।
जैन धर्म जिन चैत्य जिनालय, जैनागम का है अर्चन॥1॥

भरतैरावत ढाई द्वीप में, तीन काल के जिन तीर्थेश।
पंच विदेहों के तीर्थंकर, पूज रहे हम यहाँ विशेष॥2॥
स्वर्ग लोक में और ज्योतिषी, देवों के जो रहे विमान।
भावन व्यन्तर के गेहों में, रहे जिनालय महति महान॥3॥
मध्य लोक में मेरु कुलाचल, गिरि विजयार्थ हैं इष्वाकार।
रजताचल मानुषोत्तर गिरि तरु, नन्दीश्वर हैं मंगलकार॥4॥
रुचक सुकुण्डल गिरि पे जिनगृह, सिद्ध क्षेत्र जो हैं निर्वाण।
सहस्रकूट सुभ समवशरण जिन, मानस्तंभ हैं पूज्य महान॥5॥
उत्तम क्षमा मार्दव आदिक, बतलाए दश धर्म विशेष।
रत्नत्रय युत धर्म ऋद्धियां, सहसनाम पावें तीर्थेश॥6॥

दोहा- सोलह कारण भावना, और अठाई पर्व।
पंच कल्याणक आदि हम, पूज रहें हैं सर्व॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हं मूलनायक 1008 श्री... सहित वर्तमान भूत भविष्यत सम्बन्धी पंच भरत, पंच ऐरावत, पंच विदेह क्षेत्रावस्थित सर्व तीर्थंकर, नवदेवता, मध्य ऊर्ध्व एवं अधोलोक, नन्दीश्वर, पंचमेरु सम्बन्धित कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य चैत्यालय, गर्भ जन्म तप केवलज्ञान निर्वाण भूमि, तीर्थ क्षेत्र, अतिशय क्षेत्र, दशलक्षण, सोलहकारण, रत्नत्रयादि धर्म, ढाई द्वीप स्थित तीन कम नो करोड़ गणधरादि मुनिश्वरेभ्यो सम्पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- जिनाराध्य को पूजकर, पाना शिव सोपान।
यही भावना है विशद, पाएँ पद निर्वाण॥

॥ इत्याशीर्वादः (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

लघु स्वयंभू स्तोत्र स्तवन

दोहा- पद तीर्थंकर का प्रभु, पाए मंगलकार।
शिवपथ के राही बनें, करते भव से पार।।

आदिनाथ आदी में आए, अजितनाथ सब कर्म नशाए।
सम्भवनाथ कहे जग नामी, अभिनन्दन हैं शिवपथगामी।।
सुमतिनाथ शुभ मति के धारी, पद्मप्रभु जग मंगलकारी।
जिन सुपार्श्व महिमा दिखलाए, चन्द्रप्रभु चन्दा सम गाए।।1।।
सुविधिनाथ हैं जग उपकारी, शीतल जिन शीतलता धारी।
जिन श्रेयांस जी श्रेय जगाए, वासुपूज्य जगपूज्य कहाए।।
विमलनाथ कर्मों के जेता, जिनानन्त हैं कर्मविजेता।
धर्मनाथ हैं धर्म के धारी, शांतिनाथ जग शांतिकारी।।2।।
कुन्थुनाथ के गुण जग गाये, अरहनाथ पद शीश झुकाए।
मल्लिनाथ सब कर्म हराए, मुनिसुव्रत पावन व्रत पाए।।
नमीनाथ पद नमन हमारा, नेमिनाथ दो हमें सहारा।
पार्श्वनाथ उपसर्ग विजेता, ढोक वीर पद में जग देता।।3।।
चौबिस जिन महिमा के धारी, कहे स्वयंभू जिन अविकारी।
जो इनके पद पूज रचाये, पुण्य निधि वह प्राणी पाए।।
जिन की महिमा यह जग गाये, अर्चा कर सौभाग्य जगाए।
भाग्य उदय मेरा अब आया, नाथ आपका दर्शन पाया।।4।।
द्वार आपका अतिशयकारी, श्रावक सुधि आते अनगारी।
भक्ति भाव से महिमा गाते, पद में सविनय शीश झुकाते।।
गाते हैं जो भजनावलियाँ, खिलती हैं भक्ती की कलियाँ।
भाव बनाकर हम यह आये, शिवपद हमको भी मिल जाए।।5।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

लघु स्वयंभू स्तोत्र विधान पूजा

स्थापना

चौबिस तीर्थंकर की भक्ती, का है अनुपम जो आधार।
लघु स्वयंभू नाम है जिसका, शुभ स्तोत्र रहा मनहार।।
श्री जिनेन्द्र की भक्ती करके, प्राणी करते निज कल्याण।
हृदय कमल के आसन पर हम, करते हैं जिन का आह्वान्।।

दोहा- पूजा करते आपकी, चरणों में भगवान।
भाव सहित करते प्रभू, आज यहाँ गुणगान।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(तर्ज-वन्दे जिनवरम्...)

हम सब मिलकर करें अर्चना, तीर्थंकर भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

प्रासुक नीर कलश में भरकर, हम पूजा को लाए हैं।
जन्म-जरा से मुक्ती पाने, आज शरण में आए हैं।।
भव से मुक्ती दिलाने वाली, पूजा हैं भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम सब मिलकर करें अर्चना, तीर्थंकर भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

मलयागिरि का सुरभित चन्दन, हमने यहाँ घिसाया हैं।
भव सन्ताप नशाने का शुभ, भाव हृदय में आया है।।

भव सन्ताप नशाने वाली, अर्चा है भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

हम सब मिलकर करें अर्चना, तीर्थंकर भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

अक्षय पद पाने के हमने, मन में भाव जगाये हैं।
अतः धवल अक्षय ये अक्षत, आज चढ़ाने लाए हैं।।
अक्षत सुपद दिलाने वाली, पूजा है भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

हम सब मिलकर करें अर्चना, तीर्थंकर भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

काम रोग से मारे-मारे, भव सागर में भटक रहे।
कर्मों के बन्धन से चारों, गतियों में हम अटक रहे।।
जिन पूजा है तीन लोक में, आतम के उत्थान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हम सब मिलकर करें अर्चना, तीर्थंकर भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

काल अनादी क्षुधा रोग के, द्वारा बहुत सताए हैं।
व्यंजन सरस चढ़ाकर हम वह, रोग नशाने आए हैं॥
क्षुधा रोग को हरने वाली, है पूजा भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की॥

वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हम सब मिलकर करें अर्चना, तीर्थंकर भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की॥

वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

मोह महातम में फंसने से, सम्यक् पथ ना पाया है।
सम्यक् ज्ञान प्रकाशित करने, दीपक विशद जलाया है॥
खुशबू महके इस जीवन में, अब सम्यक् श्रद्धान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की॥

वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम सब मिलकर करें अर्चना, तीर्थंकर भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की॥

वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

अष्ट कर्म की ज्वाला जलती, जिसमें प्राणी झुलस रहे।
भव्य जीव जिन पूजा करके, मोह जाल से सुलझ रहे॥
धूप से पूजा करने आये, भक्त यहाँ भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की॥

वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम सब मिलकर करें अर्चना, तीर्थंकर भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2
हम ना परं विशुद्ध भावना, अब तक कभी बनाए हैं।
कर्मों के फल पाये हमने, मोक्ष सुफल ना पाए हैं।।
मोक्ष महाफल देने वाली, पूजा है भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हम सब मिलकर करें अर्चना, तीर्थंकर भगवान की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2
पद अनर्घ की महिमा अनुपम, जिनवाणी में गाया है।
अतः प्राप्त करने को वह पद, हमने लक्ष्य बनाया है।।
अष्ट द्रव्य से पूजा प्रभु की, आतम के कल्याण की।
जिनके द्वारा शिक्षा मिलती, वीतराग विज्ञान की।।
वन्दे जिनवरम्- वन्दे जिनवरम्-2

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- श्री जिनवर का रूप लख, होता हर्ष अपार।
जिन चरणों में आज हम, देते शांती धार।। *(शांतये शांतिधारा)*

गुण अनन्त सागर प्रभो, करो हमें गुणवान।
पुष्पाञ्जलि करते विशद, कृपा करो भगवान।। *(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)*

जयमाला

दोहा- मुक्ती पद पाए प्रभु, तीर्थंकर चौबीस।
जयमाला गाते यहाँ, झुका चरण में शीश।।

(छन्द प्राचीन)

पर परिणति से हटकर के हम, निज परिणति में आयें रे।
जिन चौबिसों के चरण कमल में, हर्ष-हर्ष गुण गायें रे॥
रत्नत्रय के द्वारा जिनवर, केवलज्ञान जगाएँ रे।
दिव्य देशना दे भव्यों को, शिव मारग दर्शाये रे॥
कोटि पूर्व की आयु पाते, धनुष पाँच सौ काया रे।
सकल ज्ञेय ज्ञायक जिनवर को, निज स्वरूप ही भाया रे॥
प्रभु का दर्शन करके हमने, निज का ज्ञान जगाया रे।
हमको अब इतिहास स्वयं का, आज ज्ञान में आया रे॥
काल अनादी दुःख निगोद के, हमने बहु दुख पाये रे।
पृथ्वी तल अग्नी वायु अरु, तरु में जीवन पाये रे॥
दो इन्द्रिय त्रस हुए भाग्य से, दुख पाके अकुलाए रे।
त्रय इन्द्रिय के कष्ट सहे जो, हमसे कहे ना जाये रें॥
पञ्चेन्द्रिय पशु बने असैनी, मन से हीन कहाए रे।
सैनी बनकर सबलो द्वारा, काटे नोचे खाये रे॥
अशुभ भाव के द्वारा मरके, नरक गति उपजाएँ रे॥
वहाँ पे जाके छेदन भेदन के, अतिशय दुख पाये रे।
तिल-तिल खण्ड हुए इस तन के, दुख कहे ना जाये रे॥
प्रबल पुण्य का उदय प्राप्त कर, मानव गति में आये रे।
मोह महामद के कारण से, सम्यक् ज्ञान पाये रे॥
मिथ्यात्वी हो भवनत्रिक में, जन्म लिए अकुलाए रे।
पुण्याश्रव को पाकर के शुभ, देवगति उपजाए रे॥
अन्तिम ग्रवेयक तक पहुँचे, फिर भी चैन ना पाए रे।
देख दूसरों के वैभव को, अति संताप बढ़ाए रे॥
देवायु का क्षय होने पर, एकेन्द्रिय में आये रे।
इस प्रकार धर-धर अनन्त भव, चतुर्गति भटकाए रे॥

पुण्ययोग से मिला जैन कुल, जिन के दर्शन पाए रे।
'विशद' भावना भाते सम्यक्, दर्श कली खिल जाए रे॥

दोहा- पूरी हो मम् कामना, दो हमको आशीष।
शिवपथ के राही बने, हे त्रिभुवनपति ईश॥

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्ताय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- चौबीसों जिन के चरण, वन्दन मेरा त्रिकाल।
यही भावना है 'विशद', कटे कर्म जंजाल॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

स्वयंभू स्तोत्र दीपार्चना

1. श्री आदिनाथ भगवान

येन स्वयं बोधमयेन लोका, आश्वासिताः केचन वित्तकार्ये।
प्रबोधिताः केचन मोक्षमार्गे, तमादिनाथं प्रणमामि नित्यम्॥1॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

जिसने आत्म ज्ञान के द्वारा, पर का भी उपकार किया।
वित्त कार्य अरु मोक्षमार्ग पर, प्रेरित कर उद्धार किया॥
मोक्षमार्ग को प्रभु ने पाया, मैं भी उसको वरण करूँ।
आदिनाथ के श्री चरणों में, विशद भाव से नमन् करूँ॥1॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

2. श्री अजितनाथ भगवान

इन्द्रादिभिः क्षीरसमुद्र-तोयैः, संस्नापितो मेरुगिरौ जिनेन्द्रः।
यः कामजेता जन-सौख्यकारी, तं शुद्ध-भावादजितं नमामि॥2॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे।।

जो सुमेरु पर्वत के ऊपर, ऐरावत पर लाए थे।
देवों ने क्षीरोदधि द्वारा, शुभ अभिषेक कराए थे।।
सुखदाता अरु कर्म विजेता, के पद को मैं वरण करूँ।
अजितनाथ के श्रीचरणों में, विशद भाव से नमन् करूँ।।2।।

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं।।

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

3. श्री संभवनाथ भगवान

ध्यान-प्रबन्धः-प्रभवेन येन, निहत्य कर्म-प्रकृतिः समस्ताः।
मुक्ति-स्वरूपां पदवी प्रपेदे, तं संभवं नौमि महानुरागात्।।3।।

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे।।

जिनने शुद्ध ध्यान के द्वारा, कर्म घातिया नाश किए।
मोक्ष महापद पाकर के जो, सिद्ध शिला पर वास किए।।
श्रीफल अर्पित करके मैं प्रभु, मोक्षमहल को ग्रहण करूँ।
संभव जिन के श्रीचरणों में, विशद भाव से नमन् करूँ।।3।।

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं।।

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

4. श्री अभिनंदननाथ भगवान

स्वप्ने यदीया जननी क्षपायां, गजादि वह्नयन्तमिदं ददर्श।
यत्तात इत्याह गुरुः परोऽयं, नौमि प्रमोदादभिनन्दनं तम्।।4।।

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

जिनकी माँ को रात्रि में शुभ, सोलह सपने आए थे।
गज से लेकर के अग्नी तक, महत् चिन्ह दर्शाये थे॥
पिता के द्वारा श्रेष्ठ कहे जो, उनको कैसे वरण करूँ।
अभिनंदन जिन के चरणों में, प्रमुदित होकर नमन् करूँ॥4॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री अभिनंदननाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

5. श्री सुमतिनाथ भगवान

कुवादिवादं जयता महान्तं, नय-प्रमाणैर्वचनैर्जगत्सु।
जैनं मतं विस्तरितं च येन, तं देव-देवं सुमतिं नमामि॥5॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

अनेकांत अरु स्याद्वाद शुभ, महत् धर्म जिनने पाया।
नय प्रमाण सम्य् वचनों से, जिनमत को भी फैलाया॥
कुमत वादियों को जीता है, उस मत को मैं ग्रहण करूँ।
सुमतिनाथ देवाधिदेव को, विशद भाव से नमन् करूँ॥5॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

6. श्री पदमप्रभु भगवान

यस्यावतारे सति पितृधिष्णये, ववर्ष रत्नानि हरेर्निदेशात्।
धनाधिपः षण्णव-मासपूर्वं, पद्मप्रभं तं प्रणमामि साधुम्॥6॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥
जन्म समय सौधर्म इन्द्र ने, धनपति को आदेश किया।
छह नौ माह पूर्व रत्नों की, वृष्टी का संदेश दिया॥
जिस पद को प्रभु ने पाया है, उसका मैं आचरण करूँ।
पद्मप्रभु के श्रीचरणों में, विशद भाव से नमन् करूँ॥6॥
प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री पद्मप्रभु जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा /दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

7. श्री सुपार्श्वनाथ भगवान

नरेन्द्र सर्पेश्वर - नाकनाथै, वाणी भवन्ती जगृहे स्वचित्ते।
यस्यात्मबोधः प्रथितः सभाया, महं सुपार्श्वं ननु तं नमामि॥7॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥
केवल ज्ञान प्रकट होने पर, जीवों को उपदेश दिया।
चक्रवर्ति धरणेन्द्र सुरों ने, दिव्य ध्वनि को ग्रहण किया॥
दिव्य देशना पाकर मैं भी, समतापूर्वक मरण करूँ।
प्रभु सुपार्श्व के पद पंकज में, विशद भाव से नमन् करूँ॥7॥
प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

8. श्री चन्द्रप्रभु भगवान

सत्प्रातिहार्यातिशय - प्रपन्नो, गुणप्रवीणो हत-दोष-संगः।
यो लोक-मोहान्ध-तमः-प्रदीपश्-चन्द्रप्रभं तं प्रणमामि भावात्॥8॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥
मूर्छा दोष रहित गुण संयुत, प्रातिहार्य वसु पाये हैं।
अतिशय चौंतिस सहित सुधी जिन, केवल ज्ञान जगाए हैं॥
दीपक मोह तिमिर के नाशक, मोह का मैं अपहरण करूँ।
चन्द्रप्रभु के पद पंकज में, विशद भाव से नमन् करूँ॥8॥
प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री चन्द्रप्रभु जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

9. श्री पुष्पदन्त भगवान

गुप्तित्रयं पञ्च महाव्रतानि, पंचोपदिष्टाः समितिश्च येन।
बभाण यो द्वादशधा तपांसि, तं पुष्पदन्तं प्रणमामि देवम्॥9॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥
पांच महाव्रत समिति गुप्ति का, जिनने शुभ उपदेश किया।
द्वादश तप तपने का पावन, भव्यों को संदेश दिया॥
वीतरागता को पाया शुभ, मैं भी उसका वरण करूँ।
पुष्पदंत प्रभु के पद पंकज, विशद भाव से नमन् करूँ॥9॥
प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री पुष्पदन्त जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

10. श्री शीतलनाथ भगवान

ब्रह्मा-व्रतान्तो जिन नायके नोत्, तम-क्षमादिर्दशधापि धर्मः।
येन प्रयुक्तो व्रत बन्ध-बुद्धया, तं शीतलं तीर्थकरं नमामि॥10॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥
उत्तम क्षमा धर्म से लेकर, ब्रह्मचर्य तक अन्त रहा।
दश प्रकार का धर्म व्रतों की, परम्परा को आप कहा॥
केवलज्ञान बुद्धि को पाकर, मैं भी उसको वरण करूँ।
शीतलनाथ प्रभु के पद में, विशद भाव से नमन् करूँ॥10॥
प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

11. श्री श्रेयांसनाथ भगवान

गणे जनानन्दकरे धरान्ते, विध्वस्त - कोपे प्रशमैकचित्ते।
यो द्वादशाङ्गं श्रुतमादिदेश, श्रेयांसमानौमि जिनं तमीशम्॥11॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥
द्वादश गण से पृथ्वी तल तक, भव्यों में आनंद भरें।
कोप विनाशक शांत स्वरूपी, द्वादशांग उपदेश करें॥
द्वादशांग श्रुत के स्वामी जिन, उनको उर में वरण करूँ।
श्रेयनाथ के श्रीचरणों में, विशद श्रेय से नमन् करूँ॥11॥
प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

12. श्री वासुपूज्य भगवान

मुक्त्यङ्गनाया रचिता विशाला, रत्नत्रयी-शेखरता च येन।
यत्कण्ठ-मासाद्य बभूव श्रेष्ठा, तं वासुपूज्यं प्रणमामि वेगात्॥12॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

रत्नत्रय के महत् हार का, जिनने शुभ निर्माण किया।
मुक्तिवधू ने कण्ठ में जिसको, श्रेष्ठ भाव से धार लिया॥
प्रभु ने जिन रत्नों को पाया, मैं भी उनको वरण करूँ।
वासुपूज्य के पूज्य चरण में, विशद भाव से नमन् करूँ॥12॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा /दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

13. श्री विमलनाथ भगवान

ज्ञानी विवेकी परम स्वरूपी, ध्यानी व्रती प्राणि-हितोपदेशी।
मिथ्यात्वघाती शिवसौख्यभोजी,बभूव यस्तं विमलं नमामि॥13॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

सम्यक् ज्ञान विवेक युक्त जो, परम स्वरूप के धारक हैं।
ध्यानी व्रती हैं मिथ्याघाती, जन-जन के उपकारक हैं॥
मोक्ष सुखों को पाने वाले, मैं भी उसका वरण करूँ।
विमल नाथ के विमल चरण में, विशद भाव से नमन् करूँ॥13॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

14. श्री अनन्तनाथ भगवान

आभ्यन्तरं बाह्यमनेकधा यः, परिग्रहं सर्व मपाचकार।
यो मार्गमुद्दिश्य हितं जनानां, वन्दे जिनं तं प्रणमाम्यनन्तम्॥14॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

जिनने जीवों के हित हेतू, मोक्षमार्ग को लक्ष्य किया।
अन्तरंग बहिरंग परिग्रह, सभी पूर्णतः त्याग दिया॥
राग त्याग बन गये दिगम्बर, मैं भी वह आचरण करूँ।
अनंत नाथ जिनवर के पद में, विशद भाव से नमन् करूँ॥14॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री अनन्तनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

15. श्री धर्मनाथ भगवान

सार्द्धं पदार्था नव सप्त तत्त्वैः, पञ्चास्तिकायाश्च न कालकायाः।
षड्द्रव्यनिर्णीति-रलोकयुक्तिर्, येनोदिता तं प्रणमामि धर्मम्॥15॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

सप्त तत्त्व अरु नव पदार्थ हैं, काल ना अस्तिकाय कहा।
अस्तिकाय हैं पांच द्रव्य छह, अरु अलोक आकाश रहा॥
जिसमें इनका कथन किया है, मैं भी उसका मनन करूँ।
धर्मनाथ जिन के चरणों में, विशद धर्मयुत नमन् करूँ॥15॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

16. श्री शांतिनाथ भगवान

यश्चक्रवर्ती भुवि पञ्चमोऽभूच् , छ्रीनन्दनो द्वादशको गुणानाम्।
निधि-प्रभुः षोडशको जिनेन्द्रस्, तं शान्तिनाथं प्रणमामि भेदात्॥16॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥
पंचम चक्रवर्ति पृथ्वी पर, नव निधि रत्नों के स्वामी।
कामदेव द्वादश सोलहवे, जिनवर मुक्ती पथगामी॥
विशद गुणों को जिनने पाया, मैं भी उनको ग्रहण करूँ।
शांतिनाथ तीर्थेश चरण में, मन वच तन से नमन् करूँ॥16॥
प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

17. श्री कुन्थुनाथ भगवान

प्रशंसितो यो न बिभर्ति हर्षं, विराधितो यो न करोति रोषम्।
शीलं-व्रताद् ब्रह्मपदं गतो यस्, तं कुन्थुनाथं प्रणमामि हर्षात्॥17॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥
नहीं प्रशंसा में हर्षित हों, निंदा में ना रोष करें।
शीलव्रतों का पालन करते, नहीं कभी विद्वेष करें॥
आतमपद को प्राप्त हुए जो, मैं भी उसका वरण करूँ।
कुन्थुनाथ के विशद चरण में, हर्षभाव से नमन् करूँ॥17॥
प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री कुन्थुनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

18. श्री अरहनाथ भगवान

न संस्तुतो न प्रणतः सभायां, यः सेवितोऽन्तर्गण-पूरणाय।
पद-च्युतैः केवलिभि-र्जिनस्य, देवाधिदेवं प्रणमाम्यरं तम् ॥18॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

अन्तर्गण की पूर्ति हेतु जो, समवशरण में आये थे।
नमन् स्तुति रहित केवली, पूर्ण समादर पाए थे॥
तीर्थंकर जिनदेव परम हैं, मैं उस पद को ग्रहण करूँ।
अरहनाथ के पद पंकज में, विशद भाव से नमन् करूँ॥18॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री अरहनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

19. मल्लिनाथ भगवान

रत्नत्रयं पूर्व-भवान्तरे यो, व्रतं पवित्रं कृतवा-नशेषम्।
कायेन वाचा मनसा विशुद्धया, तं मल्लिनाथं प्रणमामिभक्त्या॥19॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

मन, वच, तन से पूर्व भवों में, पूर्ण विशुद्धी को पाया।
रत्नत्रय व्रत पालन करके, निज आतम को भी ध्याया॥
मोहमल्ल को किया पराजित, मैं भी उसका हनन करूँ।
मल्लिनाथ जिनदेव चरण में, विशद भक्ति युत नमन् करूँ॥19॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

20. श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान

ब्रुवन्नमः सिद्ध-पदाय वाक्य, मित्यग्रहीद्यः स्वयमेव लोचम्।
लौकान्तिकेभ्यः स्तवनं निशम्य, वन्दे जिनेशं मुनिसुव्रतं तम्॥20॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

लौकांतिक देवों की श्रुति सुन, सिद्ध के पद को नमन् किया।
श्री सिद्धाय नमः कह करके, अपने हाथों लोंच किया॥
प्रभु ने सिद्ध के पद को पाया, मैं भी वह पद वरण करूँ।
मुनिसुव्रत के पद पंकज में, विशद भाव से नमन् करूँ॥20॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

21. श्री नमीनाथ भगवान

विद्यावते तीर्थकराय तस्मा, याहारदानं ददतो विशेषात्।
गृहे नृपस्याजनि रत्नवृष्टिः, स्तौमि प्रमाणान्नयतो नमिं तम्॥21॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

ज्ञानाचार युत तीर्थंकर के, नृप के घर आहार हुए।
रत्न वृष्टि तब की देवों ने, उनके भी उद्धार हुए॥
विशद ज्ञान को पाने हेतु, कर्मों से संग्राम करूँ।
नमीनाथ जिन के चरणों में, स्तुति सहित प्रणाम करूँ॥21॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री नमीनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

22. श्री नेमिनाथ भगवान

राजीमतीं यः प्रविहाय मोक्षे, स्थितिं चकारा-पुनरागमाय।
सर्वेषु जीवेषु दया दधानस्, तं नेमिनाथं प्रणमामि भक्त्या॥22॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥
जीवों पर करुणा धारण कर, जग से नाता तोड़ चले।
पुनरागमन मैटने हेतु, राजीमती को छोड़ चले॥
मोक्ष में स्थित हुए प्रभु जी, जाकर मैं विश्राम करूँ।
भक्तिभाव से नेमिनाथ जिन, पद में विशद प्रणाम करूँ॥22॥
प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

23. श्री पार्श्वनाथ भगवान

सर्पाधिराजः कमठारितो यै, र्ध्यान-स्थितस्यैव फणावितानैः।
यस्योपसर्गं निरवर्त-यत्तं, नमामि पार्श्वं महतादरेण॥23॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥
ध्यान अवस्था में बैठे थे, कमठ ने तब उपसर्ग किया।
फण फैलाया पद्मावती ने, अरु धरणेन्द्र ने दूर किया॥
ध्यान के द्वारा विशद ज्ञान हो, मैं भी उसका मनन करूँ।
महतभाव से पार्श्वनाथ के, श्री चरणों में नमन् करूँ॥23॥
प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

24. श्री महावीर भगवान

भवार्णवे जन्तु-समूह-मेन-माकर्षयामास हि धर्म-पोतात्।
मज्जन्त-मुद्वीक्ष्य य एनसापि, श्रीवर्द्धमानं प्रणमाम्यहं तम्॥24॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

पाप के कारण भवसागर में, डूब रहे थे जो प्राणी।
देख उन्हें निश्चय करके तब, सुना गये अमृत वाणी॥
धर्मपोत से उन्हें बचाया, धर्म को ध्याऊँ चारों याम।
तीर्थंकर श्रीवर्धमान को, विशदभाव से करूँ प्रणाम॥24॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री महावीर जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा / दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

25. चौबिस जिन का पूर्णार्घ्य

यो धर्मं दशधा करोति पुरुषः, स्त्री वा कृतोपस्कृतं,
सर्वज्ञ-ध्वनि-संभवं त्रिकरण, व्यापार शुद्ध्यानिशम्।
भव्यानां जयमालया विमलया, पुष्पाञ्जलिं दापयन्,
नित्यं स श्रियमातनोति सकलं, स्वर्गापवर्ग-स्थितिम्॥25॥

प्रभु स्वयंभू कहलाते, इस जग में पूजे जाते।
सारा जग महिमा गावे, भक्ती कर मुक्ती पावे॥

रचा भव्य स्त्री पुरुषों को, विमल गुणानुवाद महान्।
अर्हत् की वाणी में भाषित, दश प्रकार का धर्म प्रधान॥
मन वच तन की शुद्धी पूर्वक, पुष्प समर्पित करते हैं।
एक लक्ष्मी को पाकर शुभ, स्वर्ग मोक्ष पद वरते हैं॥25॥

प्रभु शिवराह दिखाते हैं, मोक्ष महल पहुँचाते हैं।
उनके हम गुण गाते हैं, सादर शीश झुकाते हैं।।

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलनं करोमि स्वाहा।

जाप्य-ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री वृषभादि तीर्थंकराय नमः।

समुच्चय जयमाला

दोहा- स्तोत्रों का पाठ शुभ, करते बालाबाल।
लघु स्वयंभूस्तोत्र की, गाते हम जयमाल॥

चौपाई

लघू स्वयंभू है स्तोत्र, सम्यक् भक्ति का शुभ स्रोत।
पूज्य रहे चौबिस तीर्थेश, जिसमें वर्णन रहा विशेष॥1॥

किया गया अनुपम गुणगान, जो है शिवपुर का सोपान।
भाव सहित करते जो पाठ, उनके होते ऊँचे ठाठ॥2॥

चौबीसी कई हुईं महान्, उनका करके कई गुणगान।
किए स्वयं का जो कल्याण, पाए जीव कई निर्वाण॥3॥

स्वयं ज्ञान पाते तीर्थेश, अतः स्वयंभू कहे जिनेश।
चार घातिया करके नाश, करते केवलज्ञान प्रकाश॥4॥

देते जग को हित उपदेश, छियालिस गुणधारी तीर्थेश।
दोष अठारह रहित ऋशीष, तीन लोक के होते ईश॥5॥

दिव्य ध्वनि देते भगवान, भव्य जीव सुनते हैं आन।
कोई पाते हैं श्रद्धान, कोई पाते सम्यक्ज्ञान॥6॥

चारित धारण करते जीव, पुण्य प्राप्त कई करें अतीव।
भक्ति भाव से करें प्रणाम, श्रद्धा से लेते कई नाम॥7॥

मानतुंग मुनिवर गुणवान, आदिनाथ की भक्ति महान्।
करके दिए भक्ति का स्त्रोत, कहलाया भक्तामर स्तोत्र॥8॥

कवि धनञ्जय थे गुणवान, वह भी भक्ती किए महान्।
कुमुदचन्द गाए मुनिराज, किए भक्ति मुनि वादीराज॥9॥

भक्ती मुक्ती का सोपान, ऐसा कहते हैं भगवान।
सोमा ने पाया उपहार, नाग बना भक्ती से हार॥10॥

सीता ने की भक्ति प्रधान, बना अग्नि से कमल महान्।
वारिषेण की भक्ति अपार, खड्ग बना तब सुन्दर हार॥11॥

रही भावना मेरी एक, मन में जागे सदा विवेक।
जिन चरणों में करें प्रणाम, भक्ती कर पायें शिवधाम॥12॥

दोहा- पढ़कर के स्तोत्र को, करते भक्ति विधान।
उन जीवों का शीघ्र ही, हो जाता कल्याण॥

ॐ ह्रीं स्वयंभू श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- प्रभु स्वयंभू आप हैं, हम चरणों के दास।
'विशद' मोक्ष पद पाएँ हम, पूरी कर दो आस॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

प्रशस्ति

स्वस्ति श्री वीर निर्वाण सम्वत् 2539 विक्रम सम्वत् 2070 मासोत्तमेमासे शुभ मासे श्रावण मासे शुक्ल पक्षे शुभ तिथि एकम् बुधवासरे श्री कुन्दकुन्दाम्नाये बलात्कारगणे सेनगच्छे नन्दी संघस्य परम्परायां श्री आदिसागराचार्या जातास्तत् शिष्यः श्री महावीरकीर्ति आचार्या जातास्तत् शिष्यः श्री विमलसागराचार्या जातास्तत् शिष्यः श्री भरतसागराचार्या श्री विरागसागराचार्या जातास्तत् शिष्यः विशदसागराचार्या कर कमले **विशद लघु स्वयंभू स्तोत्र विधान** लिख्यते इति शुभं भूयात्।

चौबीस जिन की आरती

(तर्ज – मांई रि मांई ...)

चौबीस जिन की आरती करने, दीप जलाकर लाए।
विशद आरती करने के शुभ, हमने भाग्य जगाए॥
जिनवर के चरणों में नमन्, प्रभुवर के चरणों में नमन्।

ऋषभ नाथ जी धर्म प्रवर्तक, अजित कर्म के जेता।
सम्भव जिन अभिनन्दन स्वामी, अतिशय कर्म विजेता॥
सुमति नाथ जिनवर के चरणों, मति सुमति हो जाए। विशद आरती ...

पद्म प्रभु जी पद्म हरे हैं, जिन सुपार्श्व जी भाई।
चन्द्र प्रभु अरु पुष्पदन्त की, धवल कांति सुखदाई॥
शीतल जिन के चरण शरण में, शीतलता मिल जाए। विशद आरती ...

श्रेयनाथ जिन श्रेय प्रदायक, वासुपूज्य जिन स्वामी।
विमलानन्त प्रभु अविकारी, जग में अन्तर्यामी॥
धर्मनाथ जी धर्म प्रदाता, इस जग में कहलाए। विशद आरती ...

शांति कुन्थु अरु अरह नाथ जी, तीन-तीन पद पाए।
चक्री काम कुमार तीर्थंकर, बनकर मोक्ष सिधाए॥
मल्लिनाथ जी मोह मल्ल को, क्षण में मार भगाए। विशद आरती ...

मुनिसुव्रत जी व्रत को धारे, नमि धर्म के धारी।
नेमिनाथ जी करुणा धारे, पार्श्वनाथ अविकारी॥
वर्धमान सन्मति वीर अति, महावीर कहलाए। विशद आरती ...

***

*

एकीभाव स्तवन

(शम्भू छंद)

दश गुण अर्जित है दिव्य गात्र शुभ, तव चरणों में करूँ नमन्।
कोटि प्रभाकर श्रेष्ठ निशाकर, जैत्र तेज तव पद अर्चन॥
दुर्जय घातिकर्म के जेता, चिर कालिक पद चरण नमन्।
घातोपजात सार दश गुणमय, शोभित तव करते वर्णन॥1॥

सुर निकाय से अर्चित जिनवर, करते हैं प्रभु गगन गमन।
दिव्य चतुर्दश अतिशयधारी, तव चरणों में करूँ नमन्॥
त्रिभुवन अधिपति सूचक अनुपम, प्रातिहार्य वसु हैं लक्षण।
अरिनाशक अर्हंत प्रभू तव, चरणों में शत्-शत् वंदन॥2॥

श्रेष्ठ परम केवल नव लब्धी, के धारी तव चरण नमन्।
सम समस्त पद आलोकित जिन, तव पद में शत्-शत् वंदन॥
हे निरंत ! बल निरूपमान हे !, नित्य सौख्यकारी अर्हन्।
नित्य निरंजन चरण आपके, विशद भाव से विशद नमन्॥3॥

तीन लोक के प्रभु मंगलमय, धारी तव पद में वंदन।
पाप हारि शिव सुख प्रद स्वामी, तव चरणों में करूँ नमन्॥
लोक पूज्य उत्तम त्रय जग में, करते तव पद में अर्चन।
शरण भूत तुम तीन लोक में, रक्षक तव पद करूँ नमन्॥4॥

पूर्व लब्ध केवल लब्धी नव, तव चरणों में विशद नमन्।
परमेश्वरर्योपलब्धी धारी, तव पद में शत-शत् वंदन॥
यूथ नाथ मुनि कुञ्जर हो तुम, तव पद करते हम अर्चन।
तीन लोक के एक नाथ तव, पद में हो सविनय वंदन॥5॥

दोहा- होकर के एकाग्र मन, करो प्रभू का ध्यान।
भक्ती का फल है विशद, होगा निज कल्याण॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि

एकीभाव स्तोत्र पूजन

(स्थापना)

वादिराज मुनिराज काज यह, अनुपम कीन्हे।
एकीभाव स्तोत्र भाव से, रच शुभ दीन्हे।।
शुभ स्तोत्र पाठकर, कीन्हें कुष्ठ निवारण।
हम पावन स्तोत्र का, करते हैं आह्वानन।
हृदय कमल पर आनकर, हे जिनेन्द्र ! अविकार।
तव चरणों में हम करें, वन्दन बारम्बार

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि रचित एकीभाव स्तोत्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि रचित एकीभाव स्तोत्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि रचित एकीभाव स्तोत्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(शम्भू छंद)

सदियों से हमको हे भगवन्, इस तृषा रोग ने घेरा है।
हम जन्म मरण करते आए, न मिटा आज तक फेरा है।।
हो नाश मेरा जन्मादि जरा, हम नीर चढ़ाने आए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार ताप ने सदियों से, प्रभु मोह जाल ने घेरा है।
उपचार अनेकों किए मगर, ना मिटा आज तक फेरा है।।
हम भव आताप विनाश करें, यह गंध चढ़ाने लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्व.स्वाहा।

करके कर्मों का नाश प्रभो !, कंचन सा तन तुमने पाया।
न अक्षय पद हमने पाया, वह पद पाने मन ललचाया।।

हम अक्षय पद के भाव लिए, शुभ यहाँ चढ़ाने लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं॥3॥

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व.स्वाहा।

भव-भव में पुष्पों से भगवन् !, हमने जीवन को महकाया।
सदियों से काम वासना को, न पूर्ण आज तक कर पाया॥
हम काम वासना नाश हेतु, यह पुष्प मनोहर लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं॥4॥

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्व.स्वाहा।

इस क्षुधा वेदना से भगवन् !, सारा यह लोक भ्रमाया है।
इच्छाएँ पूर्ण न हो पाईं, बहु भोजन हमने खाया है॥
हो क्षुधा रोग का नाश पूर्ण, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं॥5॥

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्व.स्वाहा।

अज्ञान अंधेरे में भगवन् !, यह प्राणी जग के भटक रहे।
मिथ्यात्व कषायों में फँसकर, जो माया मोह में अटक रहे॥
हम मोह अन्ध के नाश हेतु, यह दीप जलाकर लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं॥6॥

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्व.स्वाहा।

अग्नी में तप की हे भगवन् !, कर्मों की धूप जले मेरी।
अब अष्ट कर्म हों नष्ट मेरे, न लगे प्रभु इसमें देरी॥
हम अष्ट कर्म के नाश हेतु, यह गंध जलाने आये हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं॥7॥

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल रत्नत्रय का हे भगवन् !, सारे जग से अनुपम होता।
जो धारण करता भाव सहित, वह कर्म कालिमा को खोता।।
हम मोक्ष महाफल पाने को, अब श्रेष्ठ सरस फल लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उपसर्ग परीषह हे भगवन् !, हमको न बढ़ने देते हैं।
जो धर्म साधना की क्षमता, सब जीवों की हर लेते हैं।।
हम पद अनर्घ पाने हेतू, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- निर्मल जल से हम यहाँ, देते शांती धार।
विधि पूजा की पूर्ण हो, आगम के अनुसार।।

शान्तये शांतिधारा

दोहा- पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, पुष्पाञ्जलि ले हाथ।
अर्चा करते आपकी, मुक्ती पाने नाथ !।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जयमाला

दोहा- वादिराज मुनिराज का, आया मन में ख्याल।
एकीभाव स्तोत्र की, गाते हैं जयमाल।।

चौपाई

एकीभाव स्तोत्र महान्, करता रोग शोक की हान।
भाव सहित करके गुणगान, प्राणी करते हैं कल्याण।।1।।

महिमाशाली यह स्तोत्र, पावन कहा धर्म का स्रोत।
जिसकी महिमा अपरम्पार, श्रेष्ठ रहा जो मंगलकार।।2।।

पढ़कर प्राणी पाते बोध, भाव सहित जो पढ़ते शोध।
सरल सुबोध रहे शुभ छन्द, प्राणी पाते हैं आनन्द॥3॥

श्री जिनेन्द्र को हृदय बसाय, भाव सहित जो महिमा गाय।
धन वैभव सुख शांती पाय, अपने सारे कर्म नशाय॥4॥

पढ़कर प्राणी पाए ज्ञान, भाव सहित करके गुणगान।
नर भव उनका बना महान्, पाया जीवों ने कल्याण॥5॥

इस जीवन का पाया सार, मंगल कीन्हा अपरम्पार।
जागा अन्तर में श्रद्धान, क्षण में पाया सम्यक् ज्ञान॥6॥

सम्यक् चारित पाए जीव, पुण्य बन्ध फिर किए अतीव।
सम्यक् तप करके निज ध्यान, कर्म निर्जरा हुई महान्॥7॥

अंतिम पाए केवलज्ञान, स्तुति का फल रहा प्रधान।
बनें हमारे ऐसे भाव, पा जाएँ हम निज स्वभाव॥8॥

हृदय बसो हे दीनदयाल, इसीलिए गाते जयमाल।
जब तक मेरी चलती श्वाँस, तव चरणों में हो मम वास॥9॥

भव-भव में प्रभु देना साथ, झुका रहे तव चरणों माथ।
ये ही है अन्तिम अरदास, और न कोई मन में आस॥10॥

तुम ही बनो हमारे नाथ, चरणों झुका रहे हम माथ।
चरणों में करते गुणगान, होय 'विशद' मेरा कल्याण॥11॥

दोहा- नेता मुक्ती मार्ग के, सद् गुण के भण्डार।
शीश झुकाते तव चरण, नत हो बारम्बार॥

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- तीन लोक के नाथ तुम, हे त्रिभुवन पति ईश।
आशा मेरी पूर्ण हो, झुका रहे हम शीश॥

॥ इत्याशीर्वादः॥

एकीभाव स्त्रोत

सर्व कष्ट निवारक

(मन्दाक्रान्ता छंद)

एकीभावं, गत इव मया, यः स्वयं कर्मबन्धो
घोरं दुःखं, भवभवगतो, दुर्निवारः करोति।
तस्याप्यस्य, त्वयि जिनरवे, भक्तिरुन्मुक्तये चेज्,
जेतुं शक्यो, भवति न तया, कोऽवरस्तापहेतुः॥

एकीभाव को प्राप्त हुए सम, भव-भव में चलने को साथ।
कर्मबन्ध दुख देने वाला, उससे मुक्ती हेतू नाथ॥
हे जिनसूर्य ! आपकी भक्ती, से कर्मों का होय विनाश।
तन का हो संताप दूर यदि, क्या आश्चर्य है इसमें खास॥1॥

ॐ ह्रीं कर्मजनित दुःख निवारण समर्थाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

पापान्धकार नाशक

ज्योतीरूपं, दुरितनिवह, ध्वांतविध्वंसहेतुं
त्वामेवाहु, र्जिनवर चिरं, तत्त्वविद्याभियुक्ताः।
चेतोवासे, भवसि च मम, स्फारमुद्रासमानस्
तस्मिन्नंहः, कथमिव तमोवस्तुतो वस्तुमीष्टे॥

सघन पाप तम के विनाश को, हे प्रभु ! आप हो ज्योती रूप।
तत्त्व ज्ञान के ज्ञाता ऋषिवर, विशद जानते तव स्वरूप॥
ध्यान करे जो प्रभो ! आपका, उसके कर्मों का हो नाश।
अन्धकार का नाश करे ज्यों, दीपक जब भी करे प्रकाश॥2॥

ॐ ह्रीं पापान्धकार विनाशनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

सर्व व्याधि विनाशक

आनन्दाश्रुस्नपितवदनं, गद्गदं चाभिजल्पन्
यश्चायेत, त्वयि दृढ़मनाः, स्तोत्रमंत्रैर्भवन्तम्।
तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं, देहवल्मीकमध्यान्
निष्कास्यंते, विविधविषमव्याधयः काद्रवेयाः॥

स्थिर चित्त हर्ष के आँसू, से मुख धोए हुए समान।
गद्गद् वाणी से बढ़ता है, स्तोत्र रूप जो मंत्र महान॥
देह रूप वामी में रहते, चिर परिचित रोगों के नाग।
हे प्रभु शुद्ध चित्त से भरने, से वह जाते बाहर भाग॥3॥

ॐ ह्रीं विविध विषम देहव्याधि–आवेग विनाशनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

सौभाग्य उदयकारक

प्रागेवेह, त्रिदिवभवनादेष्यता भव्यपुण्यात्
पृथ्वीचक्रं, कनकमयतां, देव निन्ये त्वयेदं।
ध्यानद्वारं, मम रुचिकरं, स्वान्तगेहं प्रविष्टस्
तत्किं चित्रं, जिन ! वपुरिदं, यत्सुवर्णीकरोषि॥

भव्यों के पुण्योदय से प्रभु, स्वर्ग लोक से किया प्रयाण।
छह महीने पहिले भूमण्डल, किया सुरों ने स्वर्ण समान॥
हे जिनेन्द्र ! यदि मन के गृह में, ध्यान द्वार से हुए प्रविष्ट।
क्या आश्चर्य है कंचन काया, प्राप्त करे जो मन को इष्ट॥4॥

ॐ ह्रीं नानाविध कुष्टरोगहराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

सर्वसौख्य प्रदायी

लोकस्यैकस्त्वमसि, भगवन्निर्निमित्तेन बन्धुस्
त्वय्येवासौ, सकलविषया, शक्तिरप्रत्यनीका।

भक्तिस्फीतां, चिरमधिवसन्मामिकां, चित्तशय्यां
मय्युत्पन्नं, कथमिव ततः, क्लेशयूथं सहेथाः॥

निष्कारण बन्धू हे ! भगवन् !, लोकहितैषी परम प्रधान।
सर्व विषयगत शक्ति आप में, निराबाध हैं श्रेष्ठ महान॥
भक्ती से विस्तृत मनरूपी, शैया पर जब किए निवास।
तो मुझमें फिर दुख समूह का, सहन करोगे कैसे वास॥5॥

ॐ ह्रीं अनिमित्तेन लोकहितैषी जगत्बन्धुत्व भावाप्ताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

भवाताप विध्वंसक

जन्माटव्यां, कथमपि मया, देव दीर्घं भ्रमित्वा
प्राप्तैवेयं, तव नयकथा, स्फारपीयूषवापी।
तस्या मध्ये, हिमकरहिमव्यूहशीते नितान्तं
निर्मग्नं मां, न जहति कथं, दुःखदावोपतापाः॥

रहा घूमता बहुत समय तक, भवरूपी वन में हे देव !।
नय गाथा की सुधा बाबड़ी, किसी तरह जब मिली स्वमेव॥
बर्फ चन्द्रमा के समूह सम, शीतल है जो अतिशयवान।
दुखरूपी संताप यहाँ से, क्यों न छोड़ेगा स्थान॥6॥

ॐ ह्रीं पीयूषवर्षावत् तवपुण्यकथांश्रुत्वा जन्माटव्यां क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

कल्याणकारक

पादन्यासादपि च पुनतो, यात्रया ते त्रिलोकीं
हेमाभासो, भवति सुरभिः, श्रीनिवासश्च पद्मः।
सर्वाङ्गेण स्पृशति, भगवंस्त्वय्यशेषं मनो मे
श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्न, मामभ्युपैति॥

कमल पावड़े बिछते जाते, श्री विहार में स्वर्ण समान।
वह पवित्र हो जाते मानों, सोने जैसे कांतीमान॥
भक्ती करते समय आपका, सर्वांगों से हो स्पर्श।
प्रतिदिन हे कल्याण! श्रेष्ठ जो, मुझे प्राप्त ना होय सहर्ष॥7॥

ॐ ह्रीं विहारकाले पादन्यासे स्वर्णकमलयुक्ताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

कालज्वरहारक

पश्यन्तं त्वद्वचनममृतं, भक्तिपात्र्या पिबन्तं
कर्मरण्यात्पुरुषमसमानन्दधाम, प्रविष्टम्
त्वां दुर्वारस्मरमदहरं, त्वत्प्रसादैकभूमिं-
क्रूराकाराः कथमिव, रुजाकण्टका निर्लुठन्ति॥

काम के मद को हरने वाले, दर्श आपका रहा महान।
भक्ती रूपी पात्र के द्वारा, वचनामृत का करके पान॥
कर्मरूप वन से बाहर हो, निजानन्द गृह में कर वास।
रोग रूप काँटों के दुख का, कहाँ रहेगा वहाँ निवास॥8॥

ॐ ह्रीं त्रिभुवनजयीकामारिविजयप्राप्ताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

मानकषाय विध्वंशक

पाषाणात्मा, तदितरसमः, केवलं रत्नमूर्तिः
मानस्तम्भो, भवति च परस्तादृशो रत्नवर्गः।
दृष्टिप्राप्तो, हरति स कथं, मानरोगं नराणां
प्रत्यासत्तिर्यदि न, भवतस्तस्य तच्छक्तिहेतुः॥

मानस्तम्भ बना पत्थर से, अन्य लोष्ठ स्तंभ समान।
मानस्तम्भ रत्नमय है तो, अन्य कई भी रहे महान॥

अहंकार रूपी रोगों को, फिर कैसे वह करे हरण।
यदि समीपता नहीं आपकी, भक्त कोई न करे वरण॥9॥

ॐ ह्रीं अभिमानीजनानां मानखण्डनकराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

सर्वविघ्न संकट निवारक

ह्रद्यः प्राप्तो, मरुदपि भवन्मूर्तिशैलोपवाही
सद्यः पुसां, निरवधिरुजाधूलिबन्धं धुनोति।
ध्यानाहूतो, हृदयकमलं, यस्य तु त्वं प्रविष्टस्
तस्याशक्यः, क इह भुवने, देव लोकोपकारः॥

बहने वाली पवन आपके, कायागिरि को कर स्पर्श।
रोग नाशती है मानव के, जीवन में पाए उत्कर्ष॥
आसन जिसमें हृदय आपका, उसके रोगों का हो नाश।
हो कल्याण शीघ्र ही उसका, आश्चर्य क्या इसमें खास॥10॥

ॐ ह्रीं तववपुस्पर्शितपवनात् नानारोगोपद्रवशमनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

सर्वज्ञपद प्रदायक

जानासि त्वं, मम भवभवे, यच्च यादृक्च दुःखं
जातं यस्य, स्मरणमपि मे, शस्त्रवन्निष्पिनष्टि।
त्वं सर्वेशः, सकृप इति च, त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या,
यत्कर्त्तव्यं, तदिह विषये, देव एव प्रमाणम्॥

जन्म-जन्म में दुःख सहे जो, संस्मरण उनके हे देव !
भाले की भाँती चुभते हैं, दयासिन्धु वह मुझे सदैव॥
नाथ ! आप हो सबके स्वामी, अतः भक्ति से आया पास।
करो आप जो है प्रमाण वह, पूर्ण होय तव चरणों आस॥11॥

ॐ ह्रीं सर्वज्ञ सर्वदर्शी जिनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

ऊर्ध्वलोक साम्राज्यपद प्रदायक

प्रापद्दैवं, तव नुतिपदैर्जीव केनोपदिष्टैः
पापाचारी, मरणसमये, सारमेयोपि सौख्यं।
कः संदेहो, यदुपलभते, वासवश्रीप्रभुत्वं
जल्पजाप्यैर्मणिभिरमलैस्त्वन्नमस्कारचक्रं ।।

बुरा आचरण करने वाला, कुत्ता भी जब मरणासन्न।
महामंत्र सुन जीवंधर से, हुआ देवगति में उत्पन्न।।
मणि मालाओं के द्वारा जो, महामंत्र पढ़ता नवकार।
क्या संदेह इन्द्र का वैभव, पाता है जो अपरम्पार।।12।।

ॐ ह्रीं त्वून्नाममंत्र प्रभावात् इन्द्रोपमवैभवप्राप्ताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

मुक्तिमहल द्वार उद्घाटक

शुद्धे ज्ञाने, शुचिनि चरिते, सत्यपि त्वय्यनीचा
भक्तिर्नो, चेदनवधिसुखावञ्चिका कुञ्चिकेयं।
शक्योद्घाटं, भवति हि कथं, मुक्तिकामस्य पुंसो-
मुक्तिद्वारं, परिदृढ़महामोहमुद्राकवाटम् ।।

शुद्ध ज्ञान चारित्र सहित भी, है कोई भक्ती से हीन।
बन्द कपाट मोह का ताला, कैसे खोले कुंजि विहीन।।
सौख्य प्राप्त क्या कर पाएगा, मानव मोक्ष की आशावान।
भक्तिहीन मानव का भव से, विशद नहीं होगा उत्थान।।13।।

ॐ ह्रीं मुक्तिद्वार उद्घाटनकरण समर्थ सम्यग्दर्शन प्राप्ताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

मोक्षमार्ग प्रकाशक

प्रच्छन्नः, खल्वयमघमयैरन्धकारैः समन्तात्-
पन्था मुक्तेः, स्थपुटितपदः, क्लेशगर्तैरगाधैः।

तत्कस्तेन, व्रजति सुखतो, देव तत्त्वावभासी
यद्यग्रेऽग्रे, न भवति भवद्भारतीरत्नदीपः ॥

मोह तिमिर से ढका हुआ है, मोक्षमार्ग चारों ही ओर।
ऊबड़-खाबड़ दुख के गड्ढों, से आच्छादित है जो घोर॥
तत्त्व देशना रूपी रत्नों, के दीपक शुभ हे जिनदेव !।
आगे-आगे नहीं चलें तो, मार्ग मिले कैसे स्वमेव॥14॥

ॐ ह्रीं दीपशिखावत् पापान्धकार विनाशनाय जिनध्वनि मुक्तिपथ प्रदर्शनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

सम्पत्तिदायक

आत्मज्योतिर्निधिरनवधिर्द्रष्टरानन्दहेतुः
कर्मक्षोणीपटलपिहितो, योऽनवाप्यः परेषां।
हस्ते कुर्वन्त्यनतिचिरतस्तं भवद्भक्तिभाजः
स्तोत्रैर्बद्धप्रकृतिपरुषोद्दामधात्रीखनित्रैः ॥

आत्मज्ञान का कोष असीमित, सुख का कारण रहा महान।
कर्म पटल से ढका हुआ है, मिथ्यात्वी न पावे आन॥
पढ़कर के स्तोत्र भक्ति से, मानव बंध प्रकृति स्वरूप।
खोद कठोर भूमि को क्षण में, कर लेता है निज अनुरूप॥15॥

ॐ ह्रीं स्वपर भेदविज्ञानवलेन आत्मज्योति निधिप्राप्ताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

जलभयनाशक

प्रत्युत्पन्ना, नयहिमगिरेरायता चामृताब्धेः
या देव त्वत्पदकमलयोः, संगता भक्तिगङ्गा।
चेतस्तस्यां, मम रुचिवशादाप्लुतं क्षालितांहः
कल्माषं यद्भवति किमियं, देव संदेहभूमिः ॥

नयरूपी हिमगिरि से निकली, गंगा भक्ती रूप महान।
मोक्षरूप सागर में जाए, श्रद्धा से करना स्नान।।
मेरे मन में पाप रूप मल, साफ हुआ है अपरम्पार।
संशय का स्थान कहाँ है, हे जिन ! इसमें किसी प्रकार।।16।।

ॐ ह्रीं अनेकान्तमयीमूर्ति सरस्वतीवाग्वादिनी राग-द्वेष मोहादिमनोविकार शमनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/ दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

मनोवांछित फलप्रदायक

प्रादुर्भूतस्थिरपदसुख ! त्वामनुध्यायतो मे
त्वय्येवाहं, स इति मति, रुत्पद्यते निर्विकल्पा।
मिथ्यैवेयं, तदपि तनुते, तृप्तिमभ्रेषरूपां
दोषात्मानोप्यभिमतफलास्त्वत्प्रसादाद्भवन्ति।।

शास्वत सुख प्रगटाने वाले, हे जिनेन्द्र ! तव करके ध्यान।
मैं भी वही आप हैं जो प्रभु, हो जाता ऐसा श्रद्धान।।
यद्यपि झूठ बुद्धि है फिर भी, अविनश्वर हो तृप्ति महान।
तव अनुकंपा से दोषी जन, इच्छित फल पाते हैं आन।।17।।

ॐ ह्रीं मनोवांछित फलप्रदाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

सप्तभयनाशक

मिथ्यावादं, मलमपनुदन्सप्तभङ्गीतरङ्गैर्-
वागम्भोधिर्भुवनमखिलं, देव ! पर्येति यस्ते।
तस्यावृत्तिं, सपदि विबुधाश्चैतसैवाचलेन
व्यातन्वन्तः, सुचिरममृतासेवया तृप्नुबन्ति।।

दिव्य देशना के सागर में, सप्त भंग मय लहरें नाथ।
सर्व लोक को वेष्टित करता, मिथ्यावाद हटाए साथ।।

मनरूपी मंदार सुगिरी से, किया गया सागर मंथन।
अमृतपान करे जो मानव, मोक्षमार्ग में होय गमन॥18॥

ॐ ह्रीं सप्तभंगनयगर्भित जिनवाणी मिथ्यामलहराय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

कामदेव-सा सौंदर्य संपदाकारक

आहार्य्येभ्यः, स्पृहयति परं, यः स्वभावादहृद्यः
शस्त्रग्राही, भवति सततं, वैरिणा यश्च शक्यः।
सर्वाङ्गेषु, त्वमसि सुभगस्त्वं न शक्यः परेषां
तत्किं भूषावसनकुसुमैः, किं च शस्त्रैरुदस्त्रैः॥

गहने वस्त्र चाहते हैं वे, जो स्वभाव से रहे कुरूप।
अस्त्र-शस्त्र धारण करते वे, जिनके शत्रू हैं कोइ भूप॥
सुन्दर हो सर्वांग आप ना, शत्रू से जीते जाते।
अतः पुष्प वस्त्र आभूषण, अस्त्र-शस्त्र प्रभु न पाते॥19॥

ॐ ह्रीं अद्भुतरूपाय अजात शत्रु जिताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

संतापहर लक्ष्मी सौभाग्यदायक

इन्द्रः सेवां, तव सुकुरुतां, किं तयाश्लाघनं ते
तस्यैवेयं, भवलयकरी, श्लाघ्यतामातनोति।
त्वं निस्तारी, जननजलधेः, सिद्धिकान्तापतिस्त्वं
त्वं लोकानां, प्रभुरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्रमित्थं॥

इन्द्र आपकी सेवा करता, कहाँ प्रशंसा का यह कार्य।
नाश करे संसार वास का, होय प्रशंसा का विस्तार॥
भव सिन्धू के तारणहारे, मुक्ति रमा के तुम हो ईश।
अनुग्रह कर्त्ता तीन लोक में, प्रशंसनीय तुम हो जगदीश॥20॥

ॐ ह्रीं भवसागर तारणाय शिवकान्ता अधिपति जिनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

आधि-व्याधि विघ्न विनाशक

वृत्तिर्वाचामपरसदृशी, न त्वमन्येन तुल्यः
स्तुत्युद्गाराः, कथमिव ततस्त्वय्यमी नः क्रमन्ते।
मैवं भूवंस्तदपि, भगवन्भक्तिपीयूषपुष्टास्
तेभव्यानामभिमतफलाः, पारिजाता भवन्ति॥

वचन प्रवृत्ती अन्य रूप है, आप अन्य चेतन चित्वान।
कैसे संगत हो पाएँगे, स्तुति वाक्य मेरे भगवान॥
भक्ति सुधा से पुष्ट हुए जो, मेरे स्तुति के उद्गार।
भव्यों को इच्छित फलदाई, कल्पतरु मानो मनहार॥21॥

ॐ ह्रीं कल्पवृक्षोपम मनोवांछित फलप्रदाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

शत्रुनाशक

कोपावेशो, न तव न तव, क्वापि देव प्रसादो
व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षम्।
आज्ञावश्यं, तदपि भुवनं, सन्निधिर्वैरहारी
क्वैवंभूतं, भुवनतिलकं !, प्राभवं त्वत्परेषु॥

नहीं किसी पर हो प्रसन्न तुम, नहीं किसी पर करते रोष।
उदासीन है चित्त आपका, रहित अपेक्षा से निर्दोष॥
आशा के आधीन जगत यह, शत्रु निकटता से हो दूर।
नाथ कहाँ स्वामित्व आप से, मिले हमें ऐसा भरपूर॥22॥

ॐ ह्रीं वीतरागी वीतद्वेषीजिनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

राज्य सम्मान सौभाग्यवर्धक

देव स्तोतुं, त्रिदिवगणिकामण्डलीगीतकीर्तिं
तोतूर्तिं त्वां, सकलविषयज्ञानमूर्तिं जनो यः।
तस्य क्षेमं, न पदमटतो, जातु जाहूर्ति पन्थास्
तत्त्वग्रन्थस्मरणविषयै नैष मोमूर्ति मर्त्यः॥

स्वर्ग लोक से आने वाली, श्रेष्ठ अप्सराएँ शुभकार।
नाथ ! आपका करें स्तवन, सकल द्रव्य के जाननहार॥
मोक्षमार्ग न कुटिल कभी हो, हो सिद्धांत शास्त्र ज्ञाता।
निराबाध वह मुक्ती पथ में, विशद शीघ्र ही बढ़ जाता॥23॥

ॐ ह्रीं त्रिकालदर्शी सर्वज्ञ जिनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

सर्वसौख्यप्रदायी

चित्ते कुर्वन्निरवधिसुखज्ञानदृग्वीर्यरूपं
देव त्वां यः, समयनियमादादरेण स्तवीति।
श्रेयोमार्ग, स खलु सुकृती, तावता पूरयित्वा
कल्याणानां, भवति विषयः, पञ्चधापञ्चितानां॥

नाथ ! चतुष्टय रूप आपका, जिसने भी मन में धारा।
आदरपूर्वक समयसार युत, स्तुति को भी उच्चारा॥
भव्य जीव स्तवन मात्र से, मोक्षमार्ग को करता पूर्ण।
कल्याणक पाँचों पाता है, भव्य जीव अतिशय परिपूर्ण॥24॥

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टयसहिताय पंचकल्याणकप्राप्ताय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

बुद्धिबल प्रदायक

भक्तिप्रह्वमहेन्द्रपूजितपद !, त्वत्कीर्तने न क्षमाः
सूक्ष्मज्ञानदृशोऽपि, संयमभृतः, के हन्त मन्दावयम्।
अस्माभिः, स्तवनच्छलेन, तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते
स्वात्माधीनसुखैषिणां स खलु नः, कल्याणकल्पद्रुमः॥

नम्रीभूत हुए इन्द्रों से, पूजित जिनके अपरम्पार।
गुण गाने में न समर्थ हैं, ऋषी मुनी यति अनगार॥
मंदबुद्धि हम स्तुति करके, आदर का पाते अधिकार।
आतम सुख के लिए कल्पतरु, भक्ति आपकी है शुभकार॥25॥

ॐ ह्रीं नरेन्द्र-मुनीन्द्र-देवेन्द्रार्चित चरण-कमल जिनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

सर्वसिद्धिदायक (*स्वागता छन्द*)

वादिराजमनु शाब्दिक लोको, वादिराजमनु तार्किक सिंहः।
वादिराजमनु काव्यकृतस्ते, वादिराजमनु भव्यसहायः॥

शब्द शास्त्र के ज्ञाता सारे, वादिराज के आगे हीन।
तार्किक सिंह सभी पड़ जाते, वादिराज के आगे दीन॥
जो प्रसिद्ध कवि रहे लोक में, वादिराज के आगे आन।
हो जाते असहाय पूर्णतः, सज्जनगण जो रहे महान॥26॥

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनीन्द्र विरचित एकीभाव स्तोत्रागतजिनाय क्लीं महाबीजाक्षर सहिताय श्री चतुर्विंशति जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

जाप-ॐ ह्रीं अर्हं श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय नमः।

समुच्चय जयमाला

दोहा- एकीभाव स्तोत्र से, हो रोगों का नाश।
जयमाला गाते यहाँ, पाने ज्ञान प्रकाश॥

चौपाई छन्द

लोकालोक है अतिशयकारी, है त्रिलोक जिसमें मनहारी।
ऊर्ध्व अधो अरू मध्य बखानो, छह द्रव्यें जिसमें पहिचानो॥
मध्यलोक है मंगलकारी, जम्बूद्वीप है विस्मयकारी।
जिसमें जम्बूद्वीप बताया, भरत क्षेत्र उसमें भी गाया॥
भारत देश रहा शुभकारी, आर्यखंड की महिमा न्यारी।
पावन दक्षिण प्रान्त कहाया, धर्मक्षेत्र अतिशय कहलाया॥
मतिसागर मुनिवर को जानो, द्राविण संघ का जिनको मानो।
वादिराज मुनिवर हैं ज्ञानी, मीठी मधुर बोलते वाणी॥
मतिसागर के शिष्य कहाए, नन्दी संघी जो कहलाए।
उदय कर्म का मुनि के आया, कुष्ट रोग ने उन्हें सताया॥

मिथ्या मति का धारी जानो, धर्म विरोधी जिसको मानो।
जयसिंह राजा का दरबारी, मिथ्यामति अज्ञानी भारी।।
सभा में उसने बात चलाई, मुनि कुष्ठी होते हैं भाई।
श्रावक बात नहीं सह पाया, उसने कंचनवत् बतलाया।।
राजा ने यह बात सुनाई, हम भी दर्श करेंगे भाई।
क्षण में निर्णय हो जायगा, दोषी दण्ड स्वयं पाएगा।।
श्रावक अति मन में घबराया, मुनिवर के चरणों में आया।
अपनी सारी व्यथा सुनाई, चिंता करो न मन में भाई।।
मुनिवर ने कह धैर्य बंधाया, श्रावक लौट के घर को आया।
प्रातः राजा वहाँ पर आये, प्रजा साथ में अपनी लाए।।
मुनिवर ने तव ध्यान लगाया, एकीभाव स्तोत्र बनाया।
चौथा पद पढ़ते सुखदायी, कुष्ट विनाश हुआ तब भाई।।
कांतीमय तन मुनि का पाया, राजा मन में अति हर्षाया।
क्रोधित हुआ तभी नृप भारी, पास बुलाया वह दरबारी।।
दण्ड का नृप के मन में आया, मुनिवर ने तब उसे बताया।
उसका दोष नहीं कुछ मानो, तन में रोग था मेरे जानो।।
अंगुली आगे कर दिखलाई, उसमें कुष्ठ दिखाया भाई।
मुनिवर ने स्तोत्र सुनाया, कुष्ठ दूर करके दिखलाया।।
चमत्कार लख के नर-नारी, जय-जयकार किए थे भारी।
नृप ने जैनधर्म अपनाया, श्रद्धा से पद शीश झुकाया।।
यह स्तोत्र पढ़े जो ज्ञानी, रोगादिक नाशें वह प्राणी।
अपने सारे कर्म नशावे, अनुक्रम से वह मुक्ती पावे।।

दोहा- एकीभाव स्तोत्र की, महिमा अगम अपार।
पढ़ सुनकर के भव्य नर, पाते भवदधि पार।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनिरचित एकीभाव स्तोत्र जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सोरठा- जग में रहा महान, एकीभाव स्तोत्र यह।
करूँ विशद गुणगान, जब तक मुक्ती न मिले।।

इत्याशीर्वादः

श्री सम्मेदशिखर पूजन

स्थापना

हे तीर्थराज ! हे सिद्ध भूमि !, हे मंगलकारी ! मोक्षधाम।
हे भव बाधा हर पुण्य तीर्थ !, हे प्राची के दिनकर ललाम ! ॥
त्रैलोक्य पूज्य त्रैकालिक शुभ, भवि जीवों के पावन आधार।
श्री सिद्ध क्षेत्र सम्मेद शिखर की, बोलो भाई जय-जयकार॥
आह्वानन् करके अंतर में, जो जिन सिद्धों को ध्याते हैं।
वे सिद्ध क्षेत्र की पूजा कर, यह जीवन सफल बनाते हैं॥

ॐ ह्रीं शाश्वत तीर्थराज श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्र असंख्यात सिद्ध परमेष्ठिन् अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानन्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

(अष्टक)

क्षीर सागर सा समुज्ज्वल, धवल जल लेकर अमल।
शत् इन्द्र करते वंदना शुभ, गीत भी गाते विमल॥
भव्याम्बुजों को नित प्रफुल्लित, सूर्य सम जो कर रहा।
जो जन्म मृत्यु के दुःखों से, मुक्त करता है अहा॥1॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा।

अगुरु पंकज तुल्य सुरभित, सरस चंदन हाथ ले।
परम उज्ज्वल श्रेष्ठ केसर, अर्चना को साथ ले॥
भव्याम्बुजों को नित प्रफुल्लित, सूर्य सम जो कर रहा।
भव ताप नाशक सर्व दुख से, मुक्त जो करता अहा॥2॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो संसार ताप विनाशनाय चंदनं निर्व. स्वाहा।

पूर्णिमा की चांदनी सम, पूर्ण अक्षत ले अमल।
रमणीयता वरती उन्हें जो, अर्चना करते विमल॥

भव्याम्बुजों को नित प्रफुल्लित, सूर्य सम जो कर रहा।
शाश्वत सुपद दायक परम है, मुक्त जो करता अहा।।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्योऽक्षय पद प्राप्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा।

विश्व के कल्याण की, मंगलमयी आराधना।
चित्त को आनंददायी, हो परम पुष्पार्चना।।
भव्याम्बुजों को नित प्रफुल्लित, सूर्य सम जो कर रहा।
काम दाहक सर्व दुख से, मुक्त जो करता अहा।।4।।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो काम बाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा।

कल्पद्रुप सम फल प्रदात्री, सर्वदा हितकारिणी।
आराधना चउ सरस युत शुभ, भव्य मनसिज हारिणी।।
भव्याम्बुजों को नित प्रफुल्लित, सूर्य सम जो कर रहा।
क्षुधा की बाधा विनाशक, मुक्त जो करता अहा।।5।।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो क्षुधा रोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

है अलौकिक दिव्य मनहर, दीप की अनुपम प्रभा।
देखकर होती प्रफुल्लित, देव नर पशु की सभा।।
भव्याम्बुजों को नित प्रफुल्लित, सूर्य सम जो कर रहा।
मोहतम हो नाश क्षण में, मुक्त जो करता अहा।।6।।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो मोहाधंकार विनाशनाय दीपं निर्व. स्वाहा।

कर्पूर चंदन आदि उत्तम, परम आनन्द कारणी।
वाचस्पति सम धूप पावन, विशद प्रतिभा दायिनी।।
भव्याम्बुजों को नित प्रफुल्लित, सूर्य सम जो कर रहा।
कर्म को करके तिरोहित, मुक्त जो करता अहा।।7।।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्योऽष्ट कर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पद्रुप सम फल मनोहर, हैं समर्पित भाव से।
कर रहे आराधना हम, आनंद अतिशय चाव से।।

भव्याम्बुजों को नित प्रफुल्लित, सूर्य सम जो कर रहा।
मोक्षपद से हो विभूषित, मुक्त जो करता अहा॥8॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो मोक्ष फल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्यों की विनाशक, द्रव्य आठों ले परम।
विश्व में कल्याणकारी, कल्पद्रुप सम है शुभम्॥
भव्याम्बुजों को नित प्रफुल्लित, सूर्य सम जो कर रहा।
सर्वार्थ सिद्धि का प्रदायक, मुक्त जो करता अहा॥9॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्योऽनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौबीस तीर्थंकरों के गणधरों की कूट का अर्घ

तीर्थंकर चौबीस हुए हैं, श्रेष्ठ ऋद्धि सिद्धी धारी।
पूजनीय गणनायक उनके, हुए जहाँ में अविकारी॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥1॥

ॐ ह्रीं श्री गौतम स्वामी आदि गणधर देवग्राम उद्यान से आदि भिन्न-भिन्न, स्थानों से निर्वाण पधारे हैं तिनके चरणारविन्द को मेरा मन-वचन-काय से अत्यन्त भक्ति भाव से नमस्कार हो जलादि अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री कुन्थुनाथजी की टोंक (ज्ञानधर कूट)

कुन्थुनाथ त्रय पद के धारी, बनकर कीन्हें कर्म विनाश।
निज गुण पाकर के हे स्वामी !, किया आपने शिवपुर वास॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥2॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (ज्ञानधर कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री कुन्थुनाथ तीर्थंकरादि छियानवे कोड़ा कोड़ी छियानवे करोड़ बत्तीस लाख, छियानवे हजार सात सौ बयालीस मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नमिनाथजी की टोंक (मित्रधर कूट)

गुण अनन्त को पाने वाले, नमीनाथ जी हुए महान्।
निज गुण पाने हेतु आपका, करते हैं हम भी गुणगान॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥3॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (मित्रधर कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री नमिनाथ तीर्थंकरादि नौ कोड़ा कोड़ी एक अरब पैंतालीस लाख सात हजार नौ सौ बयालीस मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अरहनाथजी की टोंक (नाटक कूट)

इस संसार सरोवर का कहीं, छोर नजर न आता है।
वियोग आपसे हे स्वामी ! अब, और सहा न जाता है॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥4॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (नाटक कूट के दर्शन का फल छियानवे करोड़ उपवास) श्री अरहनाथ तीर्थंकरादि निन्यानवे करोड़ निन्यानवे लाख निन्यानवे हजार नौ सौ निन्यानवे मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मल्लिनाथजी की टोंक (संबल कूट)

श्री मल्लिनाथ की महिमा का, कोई भी पार नहीं पाए।
गुण गाथा कौन कहे स्वामी, कहने वाला भी थक जाए॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥5॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (संबल कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री मल्लिनाथ तीर्थंकरादि छियानवे करोड़ मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री श्रेयांसनाथजी की टोंक (संकुल कूट)

सर्व गुणों को पाने वाले, श्रेयनाथ जिन जग के ईश।
स्वर्ग लोक से इन्द्र चरण में, आकर यहाँ झुकाते शीश॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥6॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (संकुल नामक कूट के दर्शन का फल एक करोड़ प्रोषध उपवास) श्री श्रेयांसनाथ तीर्थंकरादि छियानवे कोड़ा कोड़ी छियानवे करोड़ छियानवे लाख नौ हजार पाँच सौ बयालीस मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पुष्पदंतजी की टोंक (सुप्रभ कूट)

पुष्पदंत जिनराज आपका, दिनकर सा है रूप महान्।
रत्नत्रय को पाकर स्वामी, किया आपने निज कल्याण॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥7॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (सुप्रभ कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री पुष्पदंत तीर्थंकरादि एक कोड़ा कोड़ी निन्यानवे लाख सात हजार चार सौ अस्सी मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पदमप्रभुजी की टोंक (मोहन कूट)

दर्श ज्ञान चारित्र पद्मप्रभ, पाकर पाये केवल ज्ञान।
कर्म कालिमा को विनाशकर, पाया शिवपुर में स्थान॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥8॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (मोहन कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री पदमप्रभु तीर्थंकरादि निन्यानवे कोड़ा–कोड़ी सत्तासीलाख तियालीस हजार सात सौ, सत्ताईस मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री मुनिसुव्रतनाथजी की टोंक (निर्जर कूट)

मुनिसुव्रत मुनिव्रत के धारी, हुए लोक में सर्व महान्।
कर्मदहन कर किया आपने, 'विशद' आत्मा का उत्थान॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥9॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (निर्जर नामक कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री मुनिसुव्रतनाथ तीर्थंकरादि निन्यानवे कोड़ा कोड़ी नो करोड़ निन्यानवे लाख नौ सौ निन्यानवे मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चन्द्रप्रभजी की टोंक (ललित कूट)

चन्द्र कान्ति सम चन्द्रनाथ जी, शोभित होते आभावान।
ललित कूट से मुक्ती पाए, शिवपुर दाता हैं भगवान॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥10॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (ललित कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री चन्द्रप्रभु तीर्थंकरादि नौ सौ चौरासी अरब बहत्तर करोड़ अस्सी लाख चौरासी हजार पाँच सौ पचानवे मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री आदिनाथजी की टोंक

आदिनाथ सृष्टी के कर्त्ता, हुए लोक में मंगलकार।
स्वयं बुद्ध हे नाथ ! आपके, चरणों वन्दन बारम्बार॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥11॥

ॐ ह्रीं श्री कैलाश सिद्धक्षेत्र स्थित कूट से माघ सुदी चौदस को श्री आदिनाथ तीर्थंकरादि व असंख्यात मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शीतलनाथजी की टोंक (विद्युतवर कूट)

जल चन्दन से भी अति शीतल, शीतल नाथ कहाए हैं।
हे नाथ ! आपके चरण शरण, शीतलता पाने आए हैं॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥12॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (विद्युतवर कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री शीतलनाथ तीर्थंकरादि अठारह कोड़ा-कोड़ी बयालीस करोड़ बत्तीस लाख, बयालीस हजार नौ सौ पाँच मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अनन्तनाथजी की टोंक (स्वयंप्रभ कूट)

गुण अनन्त के धारी हैं जो, जिन अनन्त है जिनका नाम।
गुण अनन्त पाने को यह जग, करता बारम्बार प्रणाम॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥13॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (स्वयंप्रभ कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री अनन्तनाथ तीर्थंकरादि छियानवे कोड़ा-कोड़ी सत्तर करोड़ सत्तर लाख सत्तर हजार सात सौ मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री संभवनाथजी की टोंक (धवल कूट)

हे सम्भव ! जिन सम्भव कर दो, हमको शिवपुर मार्ग अहा
जो पद पाया है प्रभु तुमने, वह पाने का मम् लक्ष्य रहा॥
चरण वन्दना करने हेतू, अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
अर्चा करने आज यहाँ पर, बहुत दूर से आए हैं॥14॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (धवल कूट के दर्शन का फल ब्यालीस लाख उपवास) श्री सम्भवनाथ तीर्थंकरादि नौ कोड़ा-कोड़ी बहत्तर लाख ब्यालीस हजार पाँच सौ मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री वासुपूज्य भगवान की टोंक

है पूज्य लोक में जैन धर्म, जिन वासुपूज्य अपनाये हैं।
जिसने भी जैन धर्म पाया, वह शिवपदवी को पाये हैं॥
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं॥15॥

ॐ ह्रीं श्री चम्पापुर सिद्धक्षेत्र से भादवा सुदी चौदस को श्री वासुपूज्य तीर्थंकरादि व असंख्यात मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अभिनंदननाथजी की टोंक (आनन्द कूट)

हे अभिनन्दन ! आनन्द धाम, आनन्द कूट से शिव पाए।
आनन्द प्राप्त करने प्रभु जी, हम भी तव चरणों में आए॥
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं॥16॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (आनन्द कूट के दर्शन का फल लाख उपवास) श्री अभिनन्दन तीर्थंकरादि बहत्तर कोड़ा-कोड़ी सत्तर करोड़ सत्तर लाख ब्यालीस हजार सात सौ मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री धर्मनाथजी की टोंक (सुदत्तवर कूट)

हे धर्म शिरोमणि धर्मनाथ !, तुम धर्म ध्वजा के धारी हो।
तुम मंगलमय हो इस जग में, प्रभु अतिशय मंगलकारी हो॥
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं॥17॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (सुदत्तवर कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री धर्मनाथ तीर्थंकरादि उनतीस कोड़ा-कोड़ी उन्नीस करोड़ नौ लाख नौ हजार सात सौ पंचानवे मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुमतिनाथजी की टोंक (अविचल कूट)

हे सुमतिनाथ ! तुमने जग को, शुभ मति दे शिवपद दान किया।
भक्तों को तुमने करुणाकर, होकर सौभाग्य प्रदान किया॥
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं॥18॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (अविचल कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री सुमतिनाथ तीर्थंकरादि एक कोड़ा-कोड़ी चौरासी करोड़ बहत्तर लाख, इक्यासी हजार सात सौ मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री शान्तिनाथजी भगवान की टोंक (कुन्दप्रभ कूट)

हे शांतिनाथ ! शांती दाता, जन-जन को शांती प्रदान करो।
भवि जीवों के उर में स्वामी, अब 'विशद' भावना आप भरो॥
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं॥19॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (कुन्दप्रभ कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री शांतिनाथ तीर्थंकरादि नौ कोड़ा-कोड़ी नौ लाख नौ हजार नौ सौ निन्यानवे मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री महावीर स्वामी की टोंक

तत्त्वों का सार दिया तुमने, जग को सन्मार्ग दिखाया है।
प्रभु दर्शन करके मन मेरा, गद्‌गद् होकर हर्षाया है॥
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं॥20॥

ॐ ह्रीं श्री पावापुर सिद्धक्षेत्र से कार्तिक वदी अमावस को श्री वर्द्धमान तीर्थंकरादि व असंख्यात मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सुपार्श्वनाथजी की टोंक (प्रभास कूट)

जिनवर सुपार्श्व ने संयम धर, निज को निहाल कर डाला है।
प्रभु के चरणाम्बुज का दर्शन, शुभ शिव पद देने वाला है।।
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं।।21।।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (प्रभास कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री सुपार्श्वनाथ तीर्थंकरादि उनचास कोड़ा-कोड़ी चौरासी करोड़ बहत्तर लाख सात हजार सात सौ ब्यालीस मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री विमलनाथजी की टोंक (सुवीर कूट)

हैं विमलनाथ मल रहित विमल, निर्मलता श्रेष्ठ प्रदान करें।
जो शरणागत बनकर आते, भक्तों का कल्मस पूर्ण हरें।।
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं।।22।।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (सुवीर कूट के दर्शन का फल एक करोड़ उपवास) श्री विमलनाथ तीर्थंकरादि सत्तर कोड़ा-कोड़ी साठ लाख छः हजार सात सौ ब्यालीस मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री अजितनाथजी की टोंक (सिद्धवर कूट)

प्रभु अजितनाथ हैं कर्मजयी, तुमने कर्मों का नाश किया।
पाकर के केवलज्ञान प्रभु, इस जग में ज्ञान प्रकाश किया।।
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं।।23।।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (सिद्धवर कूट के दर्शन का फल बत्तीस करोड़ उपवास) श्री अजितनाथ तीर्थंकरादि एक अरब अस्सी करोड़ चौवन लाख मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री नेमिनाथजी की टोंक

हे नेमिनाथ ! करुणा निधान, सब पर करुणा बरसाते हो।
जो शरणागत बन जाते हैं, उनको भव पार लगाते हो।।
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं।।24।।

ॐ ह्रीं श्री गिरनार सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित कूट से आषाढ़ सुदी सातै को श्री नेमिनाथ तीर्थंकरादि व बहत्तर करोड़ सात सौ मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री पार्श्वनाथजी की टोंक (स्वर्णभद्र कूट)

उपसर्गों में संघर्षों में, तुमने समता को धारा है।
कर्मों का शत्रू दल आगे, हे पार्श्व ! आपके हारा हैं।।
हम भक्त आपके गुण गाकर, यह अनुपम अर्घ्य चढ़ाते हैं।
हे नाथ ! आपके चरणों में हम, सादर शीश झुकाते हैं।।25।।

ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्र पर्वत स्थित (स्वर्णभद्र कूट के दर्शन का फल सोलह करोड़ उपवास) श्री पार्श्वनाथ तीर्थंकरादि ब्यासी करोड़ चौरासी लाख पैंतालीस हजार सात सौ ब्यालीस मुनि मोक्ष पधारे तिनके चरणारविन्द में अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा – **सब तीर्थों में श्रेष्ठ है, पावन तीरथ राज।**
गाते हैं जयमालिका, मिलकर सकल समाज।।

(तर्ज – जाने वाले एक संदेशा ...)

गिरि सम्मेद शिखर का वंदन, करने को जो भी जाते।
अक्षय पुण्य कमाने वाले, अक्षय पदवी को पाते।।
शाश्वत तीर्थराज है अनुपम, कण-कण जिसका है पावन।
हरे भरे वृक्षों के ऊपर, पुष्प खिले हैं मन भावन।।

दूर-दूर से आशा लेकर, श्रावक वंदन को आते।
अक्षय पुण्य ...॥1॥
तीर्थ वंदना करने वाले, किस्मत वाले होते हैं।
भाव सहित वंदन करके शुभ, बीज पुण्य के बोते हैं॥
श्रावक आकर भक्तिभाव से, गीत भक्ति के शुभ गाते।
अक्षय पुण्य ...॥2॥
पूर्व भवों के पुण्योदय से, अंतर में श्रद्धा जागे।
वीतराग जिनधर्म सुकुल जिन, भक्ति में भी मन लागे॥
भव्य भक्त भक्ति करने को, भाव पुष्प कर में लाते।
अक्षय पुण्य ...॥3॥
तीर्थ नाम पर हम सदियों से, धोखे खाते आए हैं।
चतुर्गति में भटके लेकिन, फिर भी समझ न पाए हैं।
पहले समझ न पाते प्राणी, अन्त समय में पछताते॥
अक्षय पुण्य ...॥4॥
मन में यह विश्वास हमारा, हम वंदन को जाएँगे।
तीर्थ वंदना करके हम भी, तीर्थ रूप हो जाएँगे॥
सिद्धों के गुण पाने की हम, विशद भावना शुभ भाते।
अक्षय पुण्य ...॥5॥

(छंद - घत्तानंद)

जय महिमाधारी, जग हितकारी, सर्व जगत् मंगलकारी।
कण-कण है पावन, अतिमन भावन, भवि जीवों को सुखकारी॥

ॐ ह्रीं श्री सम्मेद शिखर सिद्ध क्षेत्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सोरठा - **पूजा करें महान्, शाश्वत तीरथराज की।**
होय जगत् कल्याण, सर्व सौख्य मुक्ति मिले॥

(इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

सोलहकारण पूजा

स्थापना

दर्श विशुद्धयादिक रहे, शिवपद के सोपान।
सोलहकारण भावना का, करते आह्वान॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणानि ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितों भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

पूजन (चौपाई)

गंगा का यह नीर चढ़ाएँ, भव रोगों से मुक्ती पाएँ।
भव्य भावना सोलह भाएँ, हम तीर्थंकर पद प्रगटाएँ॥1॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शीलव्रतेष्वनतिचार, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग, संवेग, शक्तितस्त्याग, शक्तितस्तप साधु-समाधि, वैयावृत्यकरण, अर्हद्भक्ति, आचार्यभक्ति, बहुश्रुतभक्ति, प्रवचनभक्ति, आवश्यकापरिहाणि, मार्ग प्रभावना, प्रवचन वात्सल्य, इति षोडश कारणेभ्योः नमः जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन खुशबूदार घिसाएँ, भव सन्ताप से मुक्ती पाएँ।
भव्य भावना सोलह भाएँ, हम तीर्थंकर पद प्रगटाएँ॥2॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत जल से श्वेत धुवाए, अक्षत पदवी हम भी पाएँ।
भव्य भावना सोलह भाएँ, हम तीर्थंकर पद प्रगटाएँ॥3॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प चढ़ाकर पूज रचाएँ, काम रोग से मुक्ती पाएँ।
भव्य भावना सोलह भाएँ, हम तीर्थंकर पद प्रगटाएँ॥4॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम चरु से थाल भराएँ, क्षुधा रोग से मुक्ती पाएँ।
भव्य भावना सोलह भाएँ, हम तीर्थंकर पद प्रगटाएँ॥5॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नमयी शुभ दीप जलाएँ, मोह अंध मेरा विनशाएँ।
भव्य भावना सोलह भाएँ, हम तीर्थंकर पद प्रगटाएँ॥6॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नी में यह धूप जलाएँ, अष्ट कर्म से मुक्ती पाएँ।
भव्य भावना सोलह भाएँ, हम तीर्थंकर पद प्रगटाएँ॥7॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे फल रसदार चढ़ाएँ, मोक्ष महाफल हम भी पाएँ।
भव्य भावना सोलह भाएँ, हम तीर्थंकर पद प्रगटाएँ॥6॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

विशद अर्घ्य हम यहाँ चढ़ाएँ, पद अनर्घ्य पाके शिव जाएँ।
भव्य भावना सोलह भाएँ, हम तीर्थंकर पद प्रगटाएँ॥9॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा - सोलह कारण भावना, विशद भाव से भाय।
तीर्थंकर पदवी लहे, मोक्ष महाफल पाय॥

पुष्पांजलि क्षिपेत्

दर्शन विशुद्धि भावना

मोह तिमिर से आच्छादित है, तीन लोक सारा।
काल अनादी से भटके हैं, मिथ्या भ्रम द्वारा॥
कभी नरक नर सुर गति पायी, पशु गति में भटके।
राग द्वेष मद मोह प्राप्त कर, विषयों में अटके॥
सप्त तत्व छह द्रव्य गुणों में, श्रद्धा उर धरना।
मिथ्या भाव छोड़कर सम्यक्, रुची प्राप्त करना॥
शंकादिक दोषों को तजकर, भेद ज्ञान पाना।
दरश विशुद्धी गुणीजनों ने, या को ही माना॥1॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धि भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

विनय सम्पन्न भावना

अहंकार दुर्गति का कारण, सद्गति का नाशी।
निज के गुण को हरने वाला, दुर्गुण की राशी।।
मद की दम को दमन करें जो, बनकर श्रद्धानी।
नम्र भाव धारण करते हैं, जग में सद्ज्ञानी।।
उच्च गोत्र का कारण बन्धु, मृदुल भाव गाया।
पुण्य पुरुष होता है जिसने, विनय भाव पाया।।
'विशद' विनय सम्पन्न भावना, भाव सहित गाये।
तीर्थंकर सा पद पाकर के, सिद्ध शिला जाये।।2।।

ॐ ह्रीं विनयसम्पन्न भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

अनतिचार शीलाव्रत भावना

नर भव पाया रत्न अमौलिक, विषयों में खोता।
भोगों में अनुराग लगा जो; अतीचार होता।।
अतीचार से रहित व्रतों, को पाले जो कोई।
प्रकट होय आतम निधि उसकी, सदियों से खोई।
कृत-कारित अरु अनुमोदन से, मन-वच-तन द्वारा।
नव कोटी से शील व्रतों का, पालन हो; प्यारा।।
सोलहकारण शुभम् भावना, भाव सहित भावे।
अनतिचार व्रत शील से अपना, जीवन महकावे।।3।।

ॐ ह्रीं अनतिचार शीलव्रत भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग भावना

ज्ञानावरणी कर्म ने भाई, जग में भरमाया।
सम्यक् ज्ञान हृदय में मेरे जाग नहीं पाया।।

सम्यक् श्रद्धा के द्वारा अब, विशद ज्ञान पाना।
ज्ञाता बनकर ज्ञान के द्वारा, चित् स्वरूप ध्याना।।
अजर अमर पद पाने हेतू, ज्ञानामृत पाना।
ॐकार मय जिनवाणी के, छन्दों को गाना।।
ज्ञान योग होता अभीक्ष्ण, यह भावों से ध्याना।
'विशद' ज्ञान के द्वारा भाई, शिवपुर को जाना।।4।।

ॐ ह्रीं अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

संवेग भावना

है संसार अपार असीमित, पार नहीं पाया।
काल अनादी से प्राणी यह, जग में भरमाया।।
भय से हो भयभीत जानकर, इस जग की माया।
मंगलमय संवेग भाव बस, ये ही कहलाया।।
सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण को, सम्यक् धर्म कहा।
मोक्ष महल का सम्यक् साधन, अनुपम यही रहा।।
धर्म और उसके फल में जो, हर्ष भाव आवे।
सु संवेग भाव शास्त्रों में, ये ही कहलावे।।5।।

ॐ ह्रीं संवेग भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

शक्तितस्तप भावना

राग आग में जलकर अब तक, यूँ ही काल गया।
परिणत हुए भोग विषयों को, माना नया-नया।।
निज निधि को खोकर के अब तक, पर पदार्थ पाये,
प्रकट दिखाई देते हैं पर, हमने अपनाये।।
पर परिणत से बचकर हमको, निज निधि को पाना।
छोड़ विकल्पों को अब सारे, निज को ही ध्याना।।

यथाशक्ति जो त्याग करे वह, मोक्ष मार्ग जानो।
जैनागम में त्याग शक्तिसः, इसी तरह मानो ।।6 ।।

ॐ ह्रीं शक्तितस्तप भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

शक्तितस्त्याग भावना

काल अनादी से यह प्राणी, तन का दास रहा।
साथ निभायेगा यह मेरा, ये विश्वास रहा।।
प्यास बढ़ाता है पीने से, जैसे जल खारा।
मृगतृष्णा बढ़ती रहती है, मिले न जल धारा।।
पल-पल करके नर जीवन का, समय निकल जाता।
इन्द्रिय रोध किये बिन भाई, हो ना सुख साता।।
इच्छाओं का दमन करे फिर, महामंत्र जपना।
यथा शक्ति तप करना भाई, शक्तिसः तपना।।7।।

ॐ ह्रीं शक्तितस्त्याग भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

साधु समाधि भावना

काल अनादी से मिथ्यावश, जन्म मरण पाया।
निज शक्ति को भूल जगत् में, प्राणी भरमाया।।
आधि व्याधि अरु पद उपाधि में, नर जीवन खोया।
मोह की मदिरा पीकर भारी, कर्म बीज बोया।।
जन्म मरण होता है तन का, चेतन है ज्ञाता।
कर्म करेगा जैसा प्राणी, वैसा फल पाता।।
चेतन का ना अंत है कोई, ना ही आदी है।
श्रेष्ठ मरण औ सत् अनुभूती, साधु समाधि है।।8।।

ॐ ह्रीं साधु समाधि भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

वैय्यावृत्ती भावना

स्वारथ का संसार है भाई, सारा का सारा।
लालच की बहती है जग में, बड़ी तीव्र धारा।।
पर उपकार को भूल रहे हैं, इस जग के प्राणी।
पर में निज उपकार छुपा है, कहती जिनवाणी।।
साधक करे साधना अपनी, संयम के द्वारा।
रत्नत्रय अपने जीवन से, जिनको है प्यारा।।
विघ्न साधना में कोई भी, उनकी आ जावे।
वैय्यावृत्ती विघ्न दूर, करना ही कहलावे।।9।।

ॐ ह्रीं वैय्यावृत्ती भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

अर्हद् भक्ति भावना

चार घातिया कर्मनाशकर, 'विशद' ज्ञान पाये।
समोशरण की सभा में बैठे, अर्हत् कहलाये।।
दिव्य देशना जिनकी पावन, जग में उपकारी।
सुहित हेतु पाते इस जग के, सारे नर-नारी।।
अर्हत् होते हैं इस जग में, सद्गुण के दाता।
अतः सार्व कहलाए भगवन्, भविजन के त्राता।।
हो अनुराग गुणों में उनके, भाव सहित भाई।
अर्हत् भक्ती गुणीजनों ने, इसी तरह गाई।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हद्भक्ति भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

आचार्य भक्ति भावना

दर्शन ज्ञान चरित तप साधक, वीर्यचरण धारी।
रत्नत्रय का पालन करते, गुरु पंचाचारी।।
भक्तों के हैं भाग्य विधाता, मुक्ती पद दाता।
शिक्षा-दीक्षा देने वाले, जन-जन के त्राता।।

सत्संयम की इच्छा करके, गुरु के गुण गाते।
भाव सहित वंदन करने को, चरणों में जाते।।
गुरु चरणों की भक्ती जग में, होती सुख दानी।
गुणियों ने आचार्य भक्ति शुभ, इसी तरह मानी।।11।।

ॐ ह्रीं आचार्य भक्ति भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

बहुश्रुत (उपाध्याय) भक्ति भावना

ग्यारह अंग पूर्व चौदह के, होते जो ज्ञाता।
सम्यक् दर्शन ज्ञान के गुरुवर, होते हैं दाता।।
संतों में जो श्रेष्ठ कहे हैं, समता के धारी।
ज्ञान ध्यान तप में रत रहते, ऋषिवर अनगारी।।
करते हैं उपदेश धर्म का, जो मंगलकारी।
संत दिगम्बर और निरम्बर, नीरस आहारी।।
उपाध्याय को जग भोगों से, पूर्ण विरक्ती है।
भाव सहित गुण गाना उनके, बहुश्रुत भक्ती है।।12।।

ॐ ह्रीं बहुश्रुत भक्ति भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

प्रवचन भक्ति भावना

द्रव्य भाव श्रुत के भावों में, तत्पर जो रहते।
घोर तपस्या करने वाले, परिषह भी सहते।।
चेतन का अनुभव जो करते, निर्मल चित्धारी।
चित् को निर्मल करने वाली, वाणी मनहारी।।
सप्त तत्त्व झंकृत होते हैं, जिनवाणी द्वारा।
दिव्य देशना निःसृत होती, जैसे जलधारा।।
जिस वाणी से जागृत होवे, चेतन शक्ती है।
'विशद' ज्ञान में वर्णित पावन, प्रवचन भक्ती है।।13।।

ॐ ह्रीं प्रवचन भक्ति भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

आवश्यकापरिहाणी भावना

नहीं कभी सत् कर्म किया है, जीवन व्यर्थ गया।
भूले हैं कर्त्तव्य स्वयं के, आती बड़ी दया।।
श्रावक के गुण क्या होते हैं, जाने नहीं कभी।
पाप व्यसन जो होते जग में, करते रहे सभी।।
होते क्या कर्त्तव्य हमारे, उनको पाना है।
व्रत संयम से जीवन अपना, हमें सजाना है।।
कर्त्तव्यों के पालन हेतू, भावों से भरना।
आवश्यक ऽपरिहार भावना, सम्पूरण करना।।14।।

ॐ ह्रीं आवश्यकापरिहाणी भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

मार्ग प्रभावना भावना

सम्यक् दर्शन ज्ञान चरण यह, सम्यक् धर्म कहा।
काल अनादी से यह बन्धू, मोक्ष का मार्ग रहा।।
मोक्ष मार्ग पर आगे चलकर, और चलाना है।
मंजिल को जब तक न पाया, बढ़ते जाना है।।
महिमा अगम है जिन शासन की, कैसे उसे कहें।
संयम तप श्रद्धा भक्ती में, हरपल मगन रहें।।
मोक्ष मार्ग औ जैन धर्म की, महिमा जो गाई।
पथ प्रभावना सत् संतों ने, जग में फैलाई।।15।।

ॐ ह्रीं मार्गप्रभावना भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

प्रवचन वत्सलत्व भावना

गाय का ज्यों बछड़े के प्रति, स्नेह अटल होता।
काय वचन अरु मन से शुभ, अनुराग विमल होता।।
स्वार्थ रहित साधर्मी जन से, जो अनुराग रहा।
श्री जिनेन्द्र ने जैनागम में, ये वात्सल्य कहा।।

द्वेष भाव के द्वारा हमने, कितने कष्ट सहे।
मद माया की लपटों में हम, जलते सदा रहे।।
सदियाँ गुजर गयीं हैं लेकिन, धर्म नहीं पाया।
चेतन की यह भूल रही अरु रही मोह माया।।16।।

ॐ ह्रीं प्रवचनवत्सलत्व भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

दोहा – शब्द अर्थ की भूल को, पढ़ना सुधी सुधार।
पंच परम गुरु के चरण वंदन बारम्बार।।

ॐ ह्रीं षोडशकारण भावनायै नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/प्रज्ज्वलित दीप स्थापनं करोमि स्वाहा।

जयमाला

दोहा- तीर्थंकर पद का रहा, जो सोपान त्रिकाल।
सोलह कारण भावना, की गाते जयमाल।।

(चौपाई)

काल अनादि अनन्त बताया, इसका अन्त कहीं न पाया।
लोकालोक अनन्त कहाया, जिनवाणी में ऐसा गाया।।1।।

जीव लोक में रहते भाई, इनकी संख्या कही न जाई।
जीवादिक छह द्रव्यें जानो, सर्व लोक में इनको मानो।।2।।

चतुर्गती में जीव भ्रमाते, कर्मोंदय से सुख-दुख पाते।
मिथ्यामति के कारण जानो, भ्रमण होय ऐसा पहचानो।।3।।

उससे प्राणी मुक्ती पावें, जैन धर्म जो भी अपनावें।
प्राणी तीर्थंकर पद पाते, भव्य भावना जो भी भाते।।4।।

सोलह कारण इसको जानो, प्रथम श्रेष्ठ आवश्यक मानो।
दर्श विशुद्धि जो कहलावे, सम्यक् दृष्टि प्राणी पावे।।5।।

तो भी कोई काम न आवें, इसके बिना श्रेष्ठ सब पावे।
विनय भावना दूजी जानो, शील व्रतों का पालन मानो॥6॥

ज्ञानोपयोग अभीक्ष्ण बताया, फिर संवेग भाव उपजाया।
शक्तितः शुभ त्याग बताया, तप धारण का भाव बनाया॥7॥

साधु समाधि करें सद् ज्ञानी, वैयावृत्त्य भावना मानी।
अर्हद् भक्ती श्रेष्ठ बताई, है आचार्य भक्ति सुखदाई॥8॥

आवश्यक अपरिहार्य जानिए, प्रवचन वत्सल श्रेष्ठ मानिए।
काल अनादी से कल्याणी, श्रेष्ठ भावना भाए प्राणी॥9॥

हम भी यही भावना भाते, अपने मन में भाव बनाते।
'विशद' भावना हम ये भावें, फिर तीर्थंकर पदवीं पावें॥10॥

अपने सारे कर्म नशाएँ, कर्म नाशकर शिवपुर जाएँ।
मुक्ती पद हम भी पा जावें, और नहीं अब जगत भ्रमावें॥11॥

दोहा- सोलह कारण भावना, भाते योग सम्हाल।
भाव सहित हम वन्दना, करते विशद त्रिकाल॥

ॐ ह्रीं दर्शनविशुद्धयादि-षोडशकारणेभ्योः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- शाश्वत पद के हेतु हम, शाश्वत सोलह भाव।
भाने को उद्धत रहें, करके कोई उपाव॥

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज का अर्घ

प्रासुक अष्ट द्रव्य हे गुरुवर ! थाल सजाकर लाये हैं।
महाव्रतों को धारण कर लें, मन में भाव बनाये हैं॥
विशद सिंधु के श्री चरणों में, अर्घ समर्पित करते हैं।
पद अनर्घ हो प्राप्त हमें गुरु, चरणों में सिर धरते हैं॥

ॐ ह्रूँ 108 आचार्य श्री विशदसागर मुनीन्द्राय अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्व.स्वाहा।

सामायिक पाठ विधान (द्वात्रिंशतिका)

(स्थापना)

समता भाव कहा सामायिक, करते हैं मुनि श्रावक वृन्द।
जिन रवि के दर्शन से खिलते, भवि जीवों रूपी अरविन्द॥
जैनाचार्य श्री अमित गति कृत, द्वात्रिंशत सामायिक पाठ।
जिसको पढ़ के भवि जीव ों के, हो जाते हैं ऊँचे ठाठ॥

ॐ ह्रीं तत्त्व भावनायुत द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठ ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(शम्भू छंद)

प्यास बुझाने को आशा की, मृग तृष्णा में हम भटके।
विषय भोग विष को जल समझा, उनकी ममता में अटके॥
द्वात्रिंशद् स्तोत्र पाठ में, समायिक का है वर्णन।
समता भाव जगे अन्तर में, करते हम सम्यक् अर्चन॥1॥

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जब जला हृदय क्रोधानल से, चन्दन ने ना कुछ काम किया।
तन हुआ शांत चंदन द्वारा, मन को ना जो आराम दिया॥
द्वात्रिंशद् स्तोत्र पाठ में, समायिक का है वर्णन।
समता भाव जगे अन्तर में, करते हम सम्यक् अर्चन॥2॥

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठाय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ पर अभिमान किया अब तक, अक्षय निधि को ना पहिचाने।
विश्वास किया अब तक क्षत पर, हम हुए प्राप्त कर मस्ताने॥
द्वात्रिंशद् स्तोत्र पाठ में, समायिक का है वर्णन।
समता भाव जगे अन्तर में, करते हम सम्यक् अर्चन॥3॥

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठाय अक्षयपद प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

रत रहे वासना में हरदम, उसमें ही अब तक सुख माना।
पुरुषत्व गंवाया हे प्रभुवर !, उसके छल को ना पहचाना॥
द्वात्रिंशद् स्तोत्र पाठ में, समायिक का है वर्णन।
समता भाव जगे अन्तर में, करते हम सम्यक् अर्चन॥4॥

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठाय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खाए पुद्गल मय सरस चरु, यह भूख मिटानी चाही है।
इस क्षुधा नागिनी से बचने, हर चीज बनाकर खाई है॥
द्वात्रिंशद् स्तोत्र पाठ में, समायिक का है वर्णन।
समता भाव जगे अन्तर में, करते हम सम्यक् अर्चन॥5॥

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठाय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञान मिटाने को दीपक, हमने उजयारा माना है।
अब मोह तिमिर के नाश हेतु, सद्ज्ञान की दीप जलाना है॥
द्वात्रिंशद् स्तोत्र पाठ में, समायिक का है वर्णन।
समता भाव जगे अन्तर में, करते हम सम्यक् अर्चन॥6॥

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठाय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुख पाने को शुभ कर्म करें, अब तक हमने यह माना है।
अब अष्ट कर्म के नाश हेतु, अग्नी में धूप जलाना है॥
द्वात्रिंशद् स्तोत्र पाठ में, समायिक का है वर्णन।
समता भाव जगे अन्तर में, करते हम सम्यक् अर्चन॥7॥

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठाय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अमृत फल माना भोगों को, विषयों में ही अभ्यस्त रहे।
हे प्रभुवर ! उनके संग्रह में, हम जीवन भर अल मस्त रहे॥
द्वात्रिंशद् स्तोत्र पाठ में, समायिक का है वर्णन।
समता भाव जगे अन्तर में, करते हम सम्यक् अर्चन॥8॥

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठाय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वैभव सम्पूर्ण जगत का यह, हमको ना सुखी बना पाये।
पाने अनर्घ्य पद विशद श्रेष्ठ हम अर्घ्य बनाकर यह लाए॥
द्वात्रिंशद् स्तोत्र पाठ में, समायिक का है वर्णन।
समता भाव जगे अन्तर में, करते हम सम्यक् अर्चन॥9॥

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- पूजा की है भाव से, किया विशद गुणगान।
भक्ती का फल प्राप्त हो, पाएँ शिव सोपान॥ शान्तये शांतिधारा

दोहा- समता भावों का रहा, सामायिक शुभ नाम।
शिवपद शास्वत है शुभम् पाएँ हम अभिराम॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जयमाला

दोहा- सामायिक की भावना, करते बालाबाल।
द्वात्रिंशतिका पाठ की, गाते हम जयमाल॥

(ज्ञानोदय छंद)

दिग्वन्दन कर चारों दिश में, नव देवों के पद वन्दन।
त्रयावर्त्त पूर्वक चउ दिश में, नमस्कृति करके अर्चन॥
यथा जात मुद्रा धारण कर, खड्गासन या पद्मासन।
सर्व सावद्य योगव्रत धरके, इन्द्रिय मन का करें दमन॥1॥
करके सर्व कषाय विसर्जित, ज्ञान ध्यान में हो लवलीन।
हो एकाग्र आत्मरत रहकर, करें साधु चिन्तन समीचीन॥
संवर हेतु धर्म दशधारी, होके आप समितियों वान।
मन-वच-काय सु गुप्तिधारी, करते हैं निज आतम ध्यान॥2॥
सम्यक् चारित्र का पालन कर, द्वादश तप तपते ऋषिराज।
द्वादश अनुप्रेक्षा के चिन्तक, होते तारण तरण जहाज॥
स्वपर भेद विज्ञानी पावन, समीचीन श्रुत कहें प्रमाण।
निश्चय असत्यवहार नयों का, रखते हैं जो हरदम ध्यान॥3॥

सामायिक में समताधारी, सहन करें उपसर्ग महान।
परिषह जयी करते हैं, निष्पृह पावन वीतराग ।।
निज आतम को ध्याने वाले, प्राप्त करें शुभ शिव सोपान।
अष्ट कर्म को नाश करें वे, अष्ट सुगुण पावें निर्वाण।।4।।

दोहा- सामायिक के भाव से, करना निज का ध्यान।
'विशद' पञ्च परमेष्ठि का, करते नित गुणगान।।

ॐ ह्रीं तत्त्व भावनायुत द्वात्रिंशतिका सामायिक पाठाय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- तृण कांचन जीवन मरण, में समता का भाव।
धारण सामायिक विशद, प्रगटाए स्वभाव।।

इत्याशीर्वादः

अर्घ्यावली

दोहा- करते अर्चा हम यहां, पुष्पांजलि के साथ।
तीन योग से वन्दना, करते हम हे नाथ !।।

अथ मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ, सदाममात्मा विदधातु देव।।1।।

तीन लोक के सब जीवों से, मेरा मैत्री भाव रहे ।
गुणी जनों को देख हृदय में, प्रेम की सरिता नित्य बहे ।।
दुखी प्राणियों को लखकर के, उर में करुणा भाव जगे ।
हो माध्यस्थ भाव उनके प्रति, अविनय में जो जीव लगे ।।1।।

ॐ ह्रीं सम्यक्त्वभावनायुत श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

शरीरतः कर्त्तुमनन्त-शक्तिं, विभिन्नमात्मान-मपास्त-दोषम्।
जिनेन्द्र ! कोषादिव खड्गयष्टिं, तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः।।2।।

हे जिनेन्द्र! तव कृपा प्राप्त कर, मुझमें ऐसी शक्ति जगे ।
ज्यों तलवार म्यान से होती, भिन्न आत्मा मुझे लगे ।।
है अनन्त शक्तीशाली जो, सर्व दोष से है निर्मूल ।
तन से चेतन भिन्न करूँ मैं, क्षमता यह जागे अनुकूल ।।2।।

ॐ ह्रीं भेदविज्ञानप्रकाशक श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

दुःखे-सुखे वैरिणि-बन्धुवर्गे, योगे-वियोगे भवने-वने वा।
निराकृताशेष ममत्व-बुद्धेः-समं मनोमेऽस्तु सदापि नाथ ।।3।।

हे जिनेन्द्र! मेरे मन में शुभ, समता का संचार बहे ।
पर पदार्थ में न ममत्व हो, निर्ममत्व का भाव रहे ।।
वन में और भवन सुख दुख में, शत्रु मित्र का हो संयोग ।
या वियोग हो जाए स्वजन का, धारें समता का ही योग ।।3।।

ॐ ह्रीं समताभावनायुत श्री जिनेन्द्राय नमः नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

मुनीश ! लीनाविव कीलिताविव, स्थिरौ निषाताविव बिम्बिताविव।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा, तमो-धुनानौ हृदि दीपकाविव।।4।।

हे मुनीश ! तम के नाशक हो, दीपक सम तव दोय चरण ।
लीन हुए सम या कीलित सम, अविचल मैं कर सकूँ वरण ।।
स्थिर रहें उकेरे जैसे, मंगलमय शुभ मूर्ति समान ।
हों आसीन हृदय में मेरे, नित्य करूँ मैं जिन का ध्यान ।।4।।

ॐ ह्रीं हृदयस्थिताय श्री जिनेन्द्राय नमः नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

एकेन्द्रियाद्या यदि देव ! देहिनः, प्रमादतः सञ्चरता इतस्ततः।
क्षता विभिन्ना मिलिता निपीडिताः, तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा।।5।।

हे जिनेन्द्र! मैंने प्रमाद से, इधर उधर कीन्हा संचार ।
एकेन्द्रिय आदिक जीवों का, यदि हुआ होवे संहार ।।

मले गये या चोट खाये हों, अलग-अलग जो हुए कहीं ।
दुराचरण वह मिथ्या हो मम्, मैंने जाना उसे नहीं ।।5।।

ॐ ह्रीं सकलजीवसेवाभाव श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

विमुक्तिमार्ग प्रतिकूल वर्तिना, मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया।
चारित्र-शुद्धे-र्यदकारि लोपनं, तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो !।।6।।

हे जिनेन्द्र! मुक्ती मारग के, किया आचरण जो प्रतिकूल ।
वह कषाय इन्द्रिय विषयों के, वशीभूत हो हुई ये भूल ।।
लोप हुआ चारित्र शुद्धि का, मुझ दुर्बुद्धी के द्वारा ।
वह दुष्कृत मिथ्या हो जाए, हे स्वामी! मेरा सारा ।।6।।

ॐ ह्रीं इन्द्रियविषयकषाय दोष निवारक श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

विनिन्दनालोचन-गर्हणैरहं, मनोवचः काय-कषाय निर्मितम्।
निहन्मि पापं भवदुःखकारणं,भिषग्विषं मन्त्रगुणै-रिवाखिलम्।।7।।

हे जिनेन्द्र ! मैंने कषाय या, मन वच तन से कीन्हा पाप ।
मैं निन्दा आलोचन द्वारा, करता उसका पश्चाताप ।।
ज्यों मंत्रों की शक्ती द्वारा, विष का करता वैद्य विनाश ।
भव दुख के कारण पापों का, त्यों मेरे हो जाए नाश ।।7।।

ॐ ह्रीं योगकषाय निवारक श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

अतिक्रमं यद्विमते-र्व्यतिक्रमं, जिनातिचारं सुचरित्र कर्मणः।
व्यधामनाचार मपि प्रमादतः, प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये।।8।।

हे जिनेन्द्र! चारित्र क्रिया में, अतिक्रम हुआ रहा अज्ञान ।
या प्रमाद से हुआ व्यतिक्रम, जिसमें हुई व्रतों की हान ।।
अतिचार या अनाचार जो, मुझसे हुआ है हे भगवान !
उसकी शुद्धी हेतू करता, प्रतिक्रमण मैं करके ध्यान ।।8।।

ॐ ह्रीं चारित्र दोष निवारक श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

क्षतिं मनःशुद्धि विधेरतिक्रमं-व्यतिक्रमं शील व्रते-र्विलंघनम्।
प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्तनं, वदन्त्यनाचार-मिहाति-सक्तताम्॥9॥

हे जिनेन्द्र ! ज्ञानी जन मन की, शुद्धी में क्षति को अतिक्रम।
शीलव्रतों के उल्लंघन को, कहते हैं वह तो व्यतिक्रम॥
विषयों में यदि होय प्रवर्तन, उसको कहते हैं अतिचार।
अनाचार अत्याशक्ती को, कहते आगम के अनुसार॥9॥

ॐ ह्रीं प्रतिक्रमादिलक्षण निवारक श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

यदर्थ-मात्रा पद-वाक्यहीनं-मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम्।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी, सरस्वती केवलबोध-लब्धिम्॥10॥

हे देवी! जिन सरस्वती यदि, मेरे द्वारा हुआ प्रमाद।
वाक्य अर्थ पद मात्रा का जो, किंचित् हीन हुआ उत्पाद॥
वह अपराध क्षमा हो मेरा, देना हमको करुणा दान।
केवल ज्ञान रूप लब्धी अब, माता हमको करो प्रदान॥10॥

ॐ ह्रीं अर्थ-पद-वाक्य-मात्र दोष निवारक श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः, स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्य-सिद्धिः।
चिन्तामणिं चिन्तित-वस्तुदाने, त्वां वन्द्यमानस्य ममास्तु देवि॥11॥

हे देवी ! जिन सरस्वति तव, मन वाञ्छित फल की दाता।
चिंतामणि सम तुम को वन्दन, तव चरणों में सिर नाता॥
बोधि समाधी मुझे प्राप्त हो, परिणामों की हो शुद्धी।
निज स्वरूप की प्राप्ति हो अरु, मोक्ष सौख्य की हो सिद्धी॥11॥

ॐ ह्रीं बोधिसमाधि युत श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

यः स्मर्यते सर्व-मुनीन्द्र-वृन्दैः, यः स्तूयते सर्व-नरामरेन्द्रैः।
यो गीयते वेद-पुराण-शास्त्रैः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम्॥12॥

मुनि नायक के वृंदों से जो, नित्य स्मरण योग्य कहे ।
सुरपति नरपति जिनकी स्तुति, करने में तल्लीन रहे ॥
वेद पुराण शास्त्र में गाए, वह मेरे देवाधीदेव ।
हृदय कमल पर करुणा करके, आन विराजो श्री जिनदेव ॥12॥

ॐ ह्रीं सुर-नर-मुनि-चक्री अर्चिते श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

यो दर्शन-ज्ञान सुखस्वभावः, समस्त-संसार विकारबाह्यः।
समाधि-गम्यः परमात्म-संज्ञः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम्॥13॥

दर्श अनन्त ज्ञान को पाए, सुख स्वभाव में रहते लीन ।
इस संसार के सभी विकारों, से जो रहते पूर्ण विहीन ॥
जो समाधि के गम्य रहे हैं, परमातम संज्ञा धारी ।
वह देवों के देव हमारे, हृदय बसें मंगलकारी॥13॥

ॐ ह्रीं अनन्तचतुष्टय युत श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

निषूदते यो भवदुःख जालं, निरीक्षते यो जगदन्तरालं।
योऽन्तर्गतो योगि-निरीक्षणीयः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम्॥14॥

जो भव दुक्खों के समूह का, कर देता है पूर्ण विनाश ।
और जगत् के अन्तराल का, ज्ञान में जिसके होय प्रकाश ॥
योगी जन से प्रेक्षणीय जो, जिनका है लोकाग्र निवास ।
वह देवों के देव कृपाकर, मेरे करें हृदय में वास॥14॥

ॐ ह्रीं सकल लोकालोकप्रकाशक श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

विमुक्ति-मार्ग प्रतिपादको यो, यो जन्म-मृत्यु व्यसनाद्यतीतः।
त्रिलोक लोकी विकलोऽकलंकः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम्॥15॥

मोक्ष मार्ग के प्रतिपादक हो, जन्म मरण दु:खों से हीन ।
तीन लोक अवलोकन करते, जो शरीर से रहे विहीन ।।
कर्म कलंक हीन होते जो, वह हैं देवों के भी देव ।
हृदय कमल पर करुणा करके, आन विराजो श्री जिनदेव।।15।।

ॐ ह्रीं जन्मजरादि रोग निवारक मोक्षमार्ग प्रकाशक श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

क्रोडी-कृता-शेषशरीरवर्गाः, रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः।
निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः, स देवदेवो हृदये ममास्ताम्।।16।।

तीन लोकवर्ती जीवों को, व्याप्त करें रागादिक दोष ।
दोष रहित वह कहे अतीन्द्रिय, ज्ञान मयी होते निर्दोष ।।
जो अपाय से रहित लोक में, वह हैं देवों के भी देव ।
हृदय कमल पर करुणा करके, आन विराजो श्री जिनदेव।।16।।

ॐ ह्रीं रागद्वेषमोहादि निवारक श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

यो व्यापको विश्वजनीन वृत्तेः, सिद्धो विबुद्धो धुत-कर्मबन्धः।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं, स देवदेवो हृदये ममास्ताम्।।17।।

ज्ञेयापेक्षा व्यापक हैं जो, ज्ञान स्वभावी हैं जो सिद्ध ।
विश्व कल्याण की वृत्ती जिनकी, सर्वलोक में रही प्रसिद्ध ।।
कर्म बन्ध विध्वंशक ध्याता, सकल विकारों के नाशी ।
वह देवों के देव हमारे, अन्त:पुर के हों वासी ।।17।।

ॐ ह्रीं सर्वकर्मबंध रहित श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

न स्पृश्यते कर्मकलंक-दोषैः, यो ध्वान्त-संघैरिव तिग्मरश्मिः।
निरञ्जनं नित्य-मनेक-मेकं, तं देव-माप्तं शरणं प्रपद्ये।।18।।

तम समूह ज्यों रवि किरणों को, कर सकता है न स्पर्श ।
कर्म कलंक दोष त्यों जिनके, करते नहीं कभी भी दर्श ।।

नित्य निरंजन जो अनेक इक, वह जिनवर हैं मेरे आप्त ।
देवों के जो देव कहे हैं, उनकी शरण हमें हो प्राप्त ॥18॥

ॐ ह्रीं सकलदोषरहित नित्य निरंजन पद श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

विभासते यत्र मरीचिमाली, न विद्यमाने भुवनावभासि।
स्वात्मस्थितं बोधमय-प्रकाशं, तं देव-माप्तं शरणं प्रपद्ये ॥19॥

भुवन भास्कर सूर्य कभी भी, शोभा पाता नहीं वहाँ ।
विद्यमान रहते हैं अनुपम, प्रखर प्रकाशी प्रभू जहाँ ॥
निज आतम स्वरूप में स्थित, ज्ञान प्रकाशी रहे सदैव ।
शरण प्राप्त करता मैं उनकी, आप्त कहे देवों के देव ॥19॥

ॐ ह्रीं समस्त तापरहित आत्मध्यान निरूपक श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं, विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम्।
शुद्धं शिवं शान्त-मनाद्यनन्तं, तं देव-माप्तं शरणं प्रपद्ये ॥20॥

जिनके अवलोकन करने पर, सारा का सारा संसार ।
पृथक-पृथक दिखता है इकदम, कोई किसी का न आधार ॥
वह शिव शान्त स्वरूप सिद्ध जिन, तो हैं आदि अन्त विहीन ।
आप्त देव की शरण प्राप्त कर, भक्ती में हो जाऊँ लीन ॥20॥

ॐ ह्रीं समस्तचराचर पदार्थ विलोकनसमर्थ श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

येन क्षता मन्मथ-मान-मूर्च्छा, विषाद-निद्रा भय-शोक-चिन्ता।
क्षतोऽनलेनेव तरुप्रपञ्चस्, तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ॥21॥

वृक्ष समूह अग्नि के द्वारा, पूर्ण रूप हो जाता क्षय।
भय निद्रा मूर्छा दुख चिन्ता, शोकादिक त्यों होय विलय॥
मान और मन्मथ आदिक सब, दोषों से जो पूर्ण विहीन ।
आप्त देव की शरण प्राप्त कर, भक्ती में हो जाऊँ लीन ॥21॥

ॐ ह्रीं भय, विवाद, चिंता, रति दोषविनाशक समर्थ श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी, विधानतो नो फलको विनिर्मितः।
यतो निरस्ताक्ष-कषाय-विद्विषः, सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मतः॥22॥

परम समाधी के विधान में, न संस्तर है न पाषाण ।
न तृण पुंज और न पृथ्वी, नव निर्मित न फलक महान् ॥
क्योंकि बुद्धीमानों द्वारा, विषय कषाय शत्रु से हीन ।
निर्मल आतम ही समाधि के, मानी योग्य पूर्ण स्वाधीन ॥22॥

ॐ ह्रीं अतीन्द्रिय सुखपद प्राप्त श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

न संस्तरो भद्र ! समाधि-साधनं, न लोकपूजा न च संघमेलनम्।
यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं, विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनाम्॥23॥

हे भद्र! नहीं है संस्तर क्योंकि, नहीं लोक पूजा मनहार ।
नहीं संघ सम्मेलन अनुपम, परम समाधी का आधार ॥
इसीलिए तुम सब प्रकार से, बाह्य वासना को छोड़ो।
नित्य प्रतिदिन आत्म निरत हो, अध्यातम से नाता जोड़ो ॥ 23॥

ॐ ह्रीं समाधिसहित मरण पद प्राप्त श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

न सन्ति बाह्या मम केचनार्थाः भवामि तेषां न कदाचनाहम्।
इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं, स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र मुक्त्यै॥24॥

हे भद्र! नहीं है मेरे कोई, जो भी बाह्य पदार्थ रहे ।
नहीं कदापि मैं उनका हूँ, कोई कुछ भी हमें कहे ॥
इस प्रकार दृढ. निश्चय करके, बाह्य की तुम संगति छोड़ो।
नित्य प्रति अब निज आतम से, अपना तुम नाता जोड़ो ॥ 24॥

ॐ ह्रीं मम आत्मन समस्त गुण प्राप्तेय भावना वलेन श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

आत्मान-मात्मन्यव-लोकमानः, त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः।
एकाग्रचित्तः खलु यत्र-तत्र, स्थितोपि साधुर्लभते समाधिम्॥25॥

निज आतम को निज आतम से, करना भाई अवलोकन ।
निश्चय से सद्ज्ञान युक्त हो, और सहित हो सद्दर्शन ॥
जहाँ कभी भी स्थित साधु, मोहादिक सब करें समाप्त ।
हो विशुद्ध एकाग्र चित्त वह, परम समाधि करते प्राप्त ॥ 25॥

ॐ ह्रीं दर्शनज्ञानमयी अविनाशी सुखप्राप्त श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा, विनिर्मलः साधिगम-स्वभावः।
बहिर्भवाः सन्त्यपरे समस्ता, न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः॥26॥

मम आतम है एक हमेशा, है अधिगम स्वभाव संयुक्त ।
जो शाश्वत है परम सुनिर्मल, अन्य सभी से रहा वियुक्त ॥
बाह्य पदार्थ रहे जो कुछ भी, नहीं है अपने शाश्वत रूप ।
कर्म जनित होते हैं सब ही, जिनवर कहते वस्तु स्वरूप ॥ 26॥

ॐ ह्रीं परभावरहिताय एवं स्वभावसहिताय श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं, तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः।
पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः, कुतोहि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये॥27॥

चर्म अलग कर देने पर ज्यों, इस शरीर के मध्य कभी ।
रोम छिद्र निश्चय से उसमें, कहाँ रहेंगे कहो सभी ॥
इस शरीर के साथ भी जिसका, एक्यपना है नहीं कदा ।
स्त्री पुत्र मित्र में उसका, कैसे सम्भव ऐक्य तदा ॥27॥

ॐ ह्रीं एकत्वभावना सहिताय श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

संयोगतो दुःखमनेक भेदं, यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी।
ततस्त्रिधासौ परिवर्जनीयो-यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम्॥28॥

भव वन में संसारी प्राणी, क्योंकि पाते हैं संयोग।
इस कारण से कई प्रकार के, पावे दु:खों का वह योग।।
इसीलिए कल्याण कारिणी, मुक्ती के इच्छाकारी ।
मन वच तन से वह संयोगों, को छोड़ें हो अविकारी ।। 28।।

ॐ ह्रीं संसारसागर विमुक्त मुक्तिलक्ष्मी प्राप्त श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं-संसार-कान्तार-निपात हेतुम्।
विविक्त-मात्मान-मवेक्ष्यमाणो, निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे।।29।।

भव कान्तार में शीघ्र पतन के, कारण जो भी रहे प्रधान ।
उन विकल्प जालों का बन्धू, पूर्ण रूप करके अवसान ।।
एक मात्र आतम को भाई, सदा देखते हुए अहो।
निज परमात्म तत्त्व में बन्धू, सदा स्वयं ही लीन रहो ।।29।।

ॐ ह्रीं समस्त रागद्वेष जाल दूरकरणाय एवं आत्मलीनाय श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा, फलं तदीयं लभते शुभाशुभम्।
परेण-दत्तं यदि लभ्यते स्फुटं, स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा।।30।।

स्वयं किए जो कर्म पूर्व में, पहले अपने ही द्वारा ।
उनका फल स्पष्ट रूप से, मिले शुभाशुभ ही सारा ।।
यदी और का दिया गया फल, सुखमय रूप में होवे प्राप्त ।
तो फिर स्वयं किए कर्मों का, हो जाएगा व्यर्थ समाप्त ।। 30।।

ॐ ह्रीं परकृत्त फल प्राप्ति भाव दूर करणाय श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो-न कोपि कस्यापि ददाति किञ्चन।
विचारयन्नेवमनन्य मानसः, परो ददातीति विमुञ्च शेमुषीम्।।31।।

स्वयं उपार्जित कर्म छोड़कर, कोई किसी के लिए कभी ।
किंचित् भी दे सके कभी न, ऐसा सोचो जीव सभी ।।

अहो आत्मन्! पर कोइ दाता, ऐसी बुद्धि तुम छोड़ो।
हो एकाग्र चित्त हे बन्धू ! निज से अब नाता जोड़ो॥31॥

ॐ ह्रीं अशुभ शुभ कर्मबंध रहित श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

यैः परमात्माऽमितगतिवन्द्यः, सर्व विविक्तो भृशमनवद्यः ।
शश्वदधीतो मनसि लभन्ते, मुक्ति-निकेतं विभववरं ते ॥32॥

अमितगति से वन्दनीय जो, पुरुष लोक में कर्म विहीन ।
अति निर्दोष परम परमातम, मन से ध्याते होकर लीन ॥
वैभव वाले परम पुरुष वह, विशद मोक्ष करते हैं प्राप्त ।
अष्ट कर्म का नाश करें वह, बनते अल्प समय में आप्त ॥32॥

ॐ ह्रीं अमितगत्याचार्य पूजिताय महानन्दये प्राप्तये श्री जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

इति द्वात्रिंशतावृत्तैः परमात्मान - मीक्षते।
योऽनन्यगत चेतस्को यात्यसौ पदमव्ययम्॥33॥

जो एकाग्र चित्त होकर इन, बत्तिस पद्यों को सम्प्राप्त ।
परमातम को देख रहे वह, अविनाशी पद करते प्राप्त ॥33॥

ॐ ह्रीं द्वात्रिंशत सामायिक पाठाय श्री जिनेन्द्राय नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा/दीप प्रज्ज्वलित करोमि स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

दोहा- द्वात्रिंशतिका में किया, सामायिक गुणगान।
जयमाला गाते यहाँ, जिसकी महति महान॥

(चौपाई)

सब पापों का हो त्यागी, शुभ कार्यों का अनुरागी।
कायिक चेष्टा परिहारी, स्थिर आशन का धारी॥1॥

जो भाषा समिति विचारे, ना कुत्सित वचन उचारे।
मन में समता उपजावे, दुष्चिंता में ना जावे।।2।।

ना करें अनादर भाई, सामायिक का शिवदायी।
अपने कर्त्तव्य निभाए, ना कोई दोष लगाए।।3।।

होवे आस्त्रव परिहारी, प्राणी संवर का धारी।
जो आतम ध्यान लगाए, तन से विरागता पाए।।4।।

जो पर को पर ही माने, निज आतम को पहिचाने।
निज आतम को ही ध्याये, पर से उपयोग हटाए।।5।।

हो परमानन्द विहारी, चित्त चेतन गुण का धारी।
निज में आनन्त समाए, जो पर से कभी ना पाए।।6।।

निज भव का भ्रमण नशाए, अनुक्रम से मुक्ती पाए।
फिर सिद्ध शिला पर जाए, जो सुखानन्त को पाए।।7।।

गुण आठ विशद प्रगटाए, ना अन्य कहीं भी जाए।
जो पावन सिद्ध कहाए, जिन महिमा कही ना जाए।।8।।

दोहा– सामायिक जो जन करें, मन में समताधार।
अल्प समय में जीव वे, पाएं भवदधि पार।।

ॐ ह्रीं तत्त्वभावनायुत द्वात्रिंशत्रिका सामायिक पाठाय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– तत्त्व भावना है विशद, दर्श ज्ञान का स्तोत्र।
सम्यक् चारित से विशद, होय ज्ञान उद्योत।।

इत्याशीर्वादः

अमावश की रात्रि बंधु होती बड़ी ही काली है,
महावीर निर्माण के द्वारा फैली अनुपम लाली है।
केवल ज्ञान ज्योति गौतम ने अपने हृदय जला ली है,
अतः सभी मिलकर हम उसको कहते आई दीवाली है।।